श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर द्वारा किये गये सङ्कल्परूपी कल्पद्रुमका आश्रय लेनेपर अर्थात् उनके द्वारा रचित इस ग्रन्थमें वर्णित सेवारूपी वासनाओंको प्राप्त करने हेतु सम्पूर्ण रूपसे उन सेवाओंमें निमग्न अनुरागी जनोंका तन-मन-वचनसे निष्कपट आनुगत्य करनेपर सर्वोत्तम, निरूपम तथा अप्राकृत सङ्कल्पों की सिद्धि शीघ्र-अतिशीघ्र हो सकती है। अतएव आकांक्षित फल प्रसवकारी होनेके कारण इस ग्रन्थका 'श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः' नाम सार्थक ही है। गुरु-वैष्णवोंकी अहैतुकी कृपासे ऐसे अप्राकृत सङ्कल्पोंको ग्रहण करनेकी हृदयमें प्रेरणा आना ही साधक जीवनकी सार्थकता है।

श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

श्रीश्रीगुरु–गौराङ्गौ जयतः

श्रीश्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक

श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः

सच्चिदानन्द श्रीश्रील भक्तिविनोद ठाक
किये गये गौड़ीय भाष्यक

नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्री
श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान क
अनुगृहीत

त्रिदण्डिस्वामी
श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज
द्वारा हिन्दी भाषामें अनुवादित एवं सम्पादित

गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन

प्रकाशक —

श्रीभक्तिवेदान्त माधव महाराज

प्रथम संस्करण — १०,००० प्रतियाँ

ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान क

तिरोभाव तिथि

श्रीचैतन्याब्द ५२२

१४ अक्टूबर २००८

प्राप्ति स्थान

श्रीक

मथुरा (उ॰ प्र॰)

०५६५-२५०२३३४

श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठ

दानगली, वृन्दावन (उ॰ प्र॰)

०५६५-२४४३२७०

श्रीरमणबिहारी गौड़ीय मठ

बी-३, जनकपुरी, नई दिल्ली

०११-२५५३३२६८

श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ

राधाक

गोवर्धन (उ॰ प्र॰)

०५६५-२८१५६६८

खण्डेलवाल एण्ड सन्स

अठखम्भा बाजार,

वृन्दावन (उ॰ प्र॰)

०५६५-२४४३१०१

प्रस्तावना

आज मुझे श्रीगौड़ीय वैष्णव आचार्य मुकुटमणि महामहोपाध्याय श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक
'श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः' का हिन्दी-संस्करण श्रद्धालु पाठकोंक समक्ष प्रस्तुत करते हुए अपार आनन्दकी अनुभूति हो रही है। जिस प्रकार श्रील जीव गोस्वामिपादक
श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः उन्हींक
वर्णित लीलाओंकी अनुक्रमणिका[१] है, उसी प्रकार यह श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः भी श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक
द्वारा ही रचित श्रीकृष्णभावनामृत ग्रन्थमें वर्णित लीलाओंकी अनुक्रमणिका है। प्रस्तुत श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः मूल रूपसे श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक
इक्कीसवाँ स्तव है। विशेष करक
ठाक
अन्यान्य उपलब्ध संस्करणोंकी तुलनामें अभूतपूर्व है। इससे श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक
कल्पद्रुमः का गुरुत्व श्रीभक्तिविनोद-सारस्वत धारामें निष्णात भक्तोंक

---

[१] वह विषय-सूची, जो ग्रन्थक
कराये।

प्रस्तुत श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः ग्रन्थमें क
ग्रन्थकारने प्रथम ८८ श्लोकोंक
श्रीमती राधिकाक
सकातर प्रार्थना, श्लोक संख्या ८९–९१ में अपनी गुरुपरम्परामें
प्रकट महानुभावोंक
हुए उनक
में मञ्जुलाली सखी, गुणमञ्जरी, रसमञ्जरी, भानुमती,
लवङ्गमञ्जरी तथा रूपमञ्जरी आदिक
प्रार्थना, श्लोक संख्या ९५ में श्रीकृष्ण अथवा श्रीगौरहरि,
श्लोक संख्या ९६ में श्रीललितादेवी, श्लोक संख्या ९७ में
श्रीविशाखादेवी, श्लोक संख्या ९८ में प्रिय सखाओं तथा
प्रियनर्म सखियों, श्लोक संख्या ९९ में श्रीगिरिराज गोवर्द्धन,
श्लोक संख्या १०० में श्रीराधाक
में योगपीठ, श्लोक संख्या १०२ में श्रीवृन्दादेवी तथा श्लोक
संख्या १०३ में श्रीगोपीश्वर महादेवक
सिद्धिक
ग्रन्थकारने अपने हृदयकी वृत्तियोंको लक्षित करक
श्रीश्रीराधाकृष्णक
प्रबल इच्छा रखनेवाले भक्तोंको विशेष श्रद्धापूर्वक श्रीसङ्कल्प-
कल्पद्रुमः का आश्रय ग्रहण करने हेतु परामर्श दिया है।

यद्यपि श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक
गोविन्दक
परम-कल्याण हेतु उन्होंने इस ग्रन्थक
स्पष्ट रूपसे वर्णन किया है कि श्रीमन् महाप्रभुकी धारामें

आनेवाले साधक भक्तोंकी चरम आकांक्षा क्या होनी चाहिये तथा इस प्रकारकी आकांक्षाएँ किस प्रकारसे हृदयमें आ सकती हैं। साथ-ही-साथ इस प्रकारकी आकांक्षाओंकी सिद्धिक
करना चाहिये।

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक
सङ्कल्परूपी कल्पद्रुमका आश्रय लेनेपर अर्थात् उनक
रचित इस ग्रन्थमें वर्णित सेवारूपी वासनाओंको प्राप्त करने हेतु सम्पूर्ण रूपसे उन सेवाओंमें निमग्न अनुरागी जनोंका तन-मन-वचनसे निष्कपट आनुगत्य करनेपर सर्वोत्तम, निरूपम तथा अप्राकृत सङ्कल्पोंकी सिद्धि शीघ्र-अतिशीघ्र हो सकती है। अतएव आकांक्षित फल प्रसवकारी होनेक
ग्रन्थका 'श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः' नाम सार्थक ही है। गुरु-वैष्णवोंकी अहैतुकी कृपासे ऐसे अप्राकृत सङ्कल्पोंको ग्रहण करनेकी हृदयमें प्रेरणा आना ही साधक जीवनकी सार्थकता है।

श्रीमन् महाप्रभुने श्रीश्रील रघुनाथदास गोस्वामीका कर्त्तव्य निर्धारित करते हुए अन्तमें कहा था, "व्रजे राधाकृष्ण सेवा मानसे करिबे" (चै॰ च॰ अ॰ ६/२७) अर्थात् "मानसी रूपसे व्रजमें श्रीराधाकृष्णकी सेवा करना।" श्रीमन् महाप्रभुक
आदेशसे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि वे श्रील रघुनाथदास गोस्वामीको लक्ष्यकर सभी साधक भक्तोंको इस प्रकारका अधिकार लाभ करने हेतु प्रेरित कर रहे हैं।

यद्यपि इस प्रस्तुत ग्रन्थमें मानसी सेवा अर्थात् अष्टकालीय लीला स्मरणका विशेष प्रकारसे वर्णन किया गया है, तथापि

साधक भक्तोंको इसमें अधिकार प्राप्त करने हेतु श्रीमन् महाप्रभु द्वारा कहे गये—"ग्राम्य कथा ना शुनिबे, ग्राम्यवार्त्ता ना कहिबे। भाल ना खाइबे आर भाल ना परिबे तथा अमानी मानद हइया कृष्णनाम सदा लबे॥" आदि उपदेशोंका भी सुष्ठु रूपसे पालन करना चाहिये। अन्यथा अनधिकार चेष्टा करनेसे अर्थक

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर नदिया जिलेमें राढ़ीय ब्राह्मणकुलमें आविर्भूत हुए थे। ये हरिवल्लभक
थे। रामभद्र और रघुनाथ नामक इनक
बाल्यकालमें इन्होंने देवग्राम नामक एक ग्राममें व्याकरण पाठ समाप्तकर मुर्शिदाबाद जिलेक
(गुरुगृहमें) भक्तिशास्त्रोंका अध्ययन किया। इन्होंने बिन्दु, किरण और कणा—इन तीनों ग्रन्थोंकी रचना शैयदाबाद ग्राममें अध्ययन करते समय ही की थी। कुछ दिनों बाद ये गृहत्यागकर वृन्दावन चले आये। यहींपर इन्होंने विभिन्न ग्रन्थोंकी रचनाएँ व टीकाएँ लिखीं।

श्रीमन् महाप्रभु और उनक
अप्रकट होनेपर शुद्धभक्ति-धारा श्रीनिवासाचार्य, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीश्यामानन्द—तीनों प्रभुओंक
प्रवाहित हो रही थी। श्रील नरोत्तम दास ठाकुरकी शिष्य परम्परामें श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर चतुर्थ-पुरुष हैं। श्रील नरोत्तम दास ठाकुर महाशयक

नारायण चक्रवर्ती महाशय था। ये मुर्शिदाबाद जिलेक
अन्तर्गत बालूचर गम्भिलामें रहते थे। इनका कोई पुत्र न
था, क
श्रील नरोत्तम दास ठाकुरक
भी थे, जिनका नाम रामकृष्ण भट्टाचार्य था। इन रामकृष्ण
भट्टाचार्यक
श्रीगङ्गानारायणने दत्तकपुत्रक
शिष्य राधारमण चक्रवर्ती थे और ये श्रीराधारमण ही
श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरक
सारार्थदर्शिनी टीकाके प्रारम्भमें इन्होंने ऐसा लिखा है—

श्रीरामकृष्णगङ्गाचरणान् नत्वा गुरुनुरुप्रेम्नः।
श्रीलनरोत्तमनाथ श्रीगौराङ्गप्रभुं नौमि॥

अर्थात् इस श्लोकमें श्रीरामसे उनक
रमण, कृष्णसे परमगुरुदेव श्रीकृष्णचरण, गङ्गाचरणसे परात्पर गुरुदेव श्रीगङ्गानारायण, नरोत्तमसे परमपरात्पर गुरुदेव श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और 'नाथ' शब्दसे श्रील नरोत्तम दास ठाकुरक गुरुदेव श्रीलोकनाथ गोस्वामीको समझना चाहिये। इस प्रकार श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर श्रीमन् महाप्रभु तक अपनी गुरुपरम्पराको प्रणाम कर रहे हैं, ऐसा सूचित होता है।

श्रीनिवासाचार्यकी कन्याका नाम हेमलता ठाक
ये परमविदुषी तथा परम–वैष्णवी थीं। इन्होंने अपने रूपकविराज नामक एक उदासीन शिष्यको गौड़ीय–समाजसे बहिष्कृत कर दिया था। तबसे वे रूपकविराज गौड़ीय–वैष्णव–समाजमें

'अतिबाड़ी' नामसे परिचित हुए। उन्होंने गौड़ीय-वैष्णवोंक
सिद्धान्तक
क
गृहस्थ व्यक्ति भक्तिका आचार्य नहीं हो सकता। विधिमार्गका सम्पूर्ण रूपसे अनादरकर उच्छृंखलतापूर्ण रागमार्गका प्रचार करना ही इनका उद्देश्य था। श्रवण-कीर्त्तनका त्यागकर
क
इनका नवीन मत था।

सौभाग्यवशतः श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक
समय वर्त्तमान थे। उन्होंने श्रीमद्भागवतक
सारार्थदर्शिनी टीकामें इसका प्रतिवाद किया। आचार्यवंशमें नित्यानन्द प्रभुक
अद्वैताचार्यक
उपाधि प्रदान और ग्रहण करना उचित नहीं है—रूपकविराजक ऐसे विचारका श्रीचक्रवर्ती ठाकुरने प्रतिवाद किया। उन्होंने प्रमाणित किया कि आचार्यवंशक
सन्तानोंक
परन्तु वंश-परम्परा क्रमसे धन और शिष्यक
आचार्यकुलमें उत्पन्न अयोग्य सन्तानोंक
साथ 'गोस्वामी' शब्दका प्रयोग शाश्वत-शास्त्र विरोधी और नितान्त अवैध कार्य है—ऐसा भी प्रमाणित किया। इसीलिए उन्होंने (श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरने) आचार्यका कार्य करनेपर भी अपने नामक
कदापि नहीं किया। उन्होंने आधुनिक कालक

अयोग्य आचार्य सन्तानोंको शिक्षा देनेक
है।

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक
वृद्ध हो गये थे तथा अधिकांश समय वे अर्द्धबाह्य और अन्तर्दशामें स्थित होकर भजनमें विभोर रहते थे, उसी समय जयपुरमें श्रीगौड़ीय-वैष्णवों तथा स्वकीयावादी अन्यान्य वैष्णवोंमें एक विवाद छिड़ गया। उस समय द्वितीय जयसिंह जयपुरक नरेश थे। विरुद्ध पक्षवाले वैष्णवोंने द्वितीय जयसिंहको यह समझाया कि श्रीगोविन्ददेवक
शास्त्र-सम्मत नहीं है। इसका कारण यह है कि श्रीमद्भागवत या विष्णुपुराणमें श्रीमती राधिकाक
नहीं है। श्रीमती राधिका वैदिक विधियोंके अनुसार श्रीकृष्णकी विवाहिता पत्नी नहीं हैं। दूसरी बात गौड़ीय-वैष्णव साम्प्रदायिक वैष्णव नहीं हैं। वैष्णव-सम्प्रदाय चार ही हैं, जो अनादि कालसे चले आ रहे हैं। उनक
ब्रह्म-सम्प्रदाय, रुद्र-सम्प्रदाय और सनक-सम्प्रदाय। कलियुगमें इन सम्प्रदायोंक
श्रीविष्णुस्वामी और श्रीनिम्बादित्य हैं। गौड़ीय-वैष्णव इन चारों सम्प्रदायोंसे बहिर्भूत हैं, अतः वे शुद्ध साम्प्रदायिक वैष्णव नहीं हैं। विशेषतः इस वैष्णव-सम्प्रदायका अपना कोई ब्रह्मसूत्रका भाष्य नहीं है, अतएव इसे परम्परागत वैष्णव-सम्प्रदाय नहीं माना जा सकता है। उस समय महाराज जयसिंहने श्रीवृन्दावनक
श्रील रूपगोस्वामीका अनुगत जानकर श्रीरामानुजीय वैष्णवोंक

साथ विचार करनेक
भजनानन्दमें विभोर रहनेक
छात्र गौड़ीय-वैष्णव-वेदान्ताचार्य, पण्डितक
श्रीपाद बलदेव विद्याभूषण और अपने शिष्य श्रीकृष्णदेवको
जयपुरमें विचार करनेक
जाति-गोस्वामीगण अपने मध्व-सम्प्रदायक
भूल चुक
विचारधाराका अनादरकर गौड़ीय-वैष्णवोंक
विपत्तिका आह्वान किया था। श्रील बलदेव विद्याभूषणने अकाटय युक्तियों और सुदृढ़ शास्त्रीय प्रमाणोंके द्वारा यह प्रमाणित किया कि गौड़ीय सम्प्रदाय मध्वानुगत शुद्ध वैष्णव-सम्प्रदाय है। इस सम्प्रदायका नाम श्रीब्रह्म-माध्व-गौड़ीय-वैष्णव-सम्प्रदाय है। हमारे पूर्वाचार्य श्रील जीवगोस्वामी, कविकर्णपूर आदिने इसे स्वीकार किया है। श्रीगौड़ीय-वैष्णवजन श्रीमद्भागवतको ही वेदान्तसूत्रका अकृत्रिम भाष्य मानते हैं। इसलिए गौड़ीय-वैष्णव-सम्प्रदायमें स्वतन्त्र रूपसे वेदान्तसूत्रक
पुराणोंमें श्रीमती राधिकाक
स्वरूपा, श्रीकृष्णकी नित्यप्रिया हैं। श्रीमद्भागवतक
स्थलोंमें विशेषतः दसवें-स्कन्धकी व्रजलीलाक
सर्वत्र ही श्रीमती राधिकाका अत्यन्त गूढ़ रूपसे उल्लेख है। सिद्धान्तविद्, रसिक और भावुक भक्त ही इस गूढ़ रहस्यको समझ सकते हैं। श्रीबलदेव विद्याभूषण प्रभुने उस विद्वत्सभामें प्रतिपक्षक
दूरकर श्रीगौड़ीय-वैष्णवोंका मध्वानुगत्य प्रमाणित किया।

विपक्ष निरुत्तर हो गया, फिर भी उन्होंने श्रीगौड़ीय-वैष्णव-सम्प्रदायका कोई वेदान्त-भाष्य न होनेपर उन्हें शुद्ध पारम्परिक वैष्णव माननेसे अस्वीकार कर दिया। तब वहींपर ही श्रीबलदेव विद्याभूषण प्रभुने ब्रह्मसूत्रके 'श्रीगोविन्द-भाष्य' नामक सुप्रसिद्ध गौड़ीय-भाष्यकी रचना की। इस प्रकारसे श्रीगोविन्ददेवक
प्रारम्भ हुई तथा गौड़ीय-वैष्णवोंकी श्रीब्रह्म-माध्व-गौड़ीय-वैष्णव-सम्प्रदायक
ठाकुरक
श्रीगोविन्द-भाष्यकी रचना की तथा गौड़ीय-वैष्णवोंका श्रीमध्वानुगत्य प्रमाणित किया—इस विषयमें तनिक भी सन्देहका अवकाश नहीं है। श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरका यह साम्प्रदायिक कार्य गौड़ीय-वैष्णवोंक
लिपिबद्ध है और रहेगा भी।

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरने स्वरचित 'मन्त्रार्थ-दीपिका' में एक विशेष घटनाका वर्णन किया है—किसी समय उन्होंने श्रीचैतन्यचरितामृतका पठन-पाठन करते हुए कामगायत्रीक
किया—

कामगायत्री-मन्त्ररूप, हय कृष्णेर स्वरूप,
सार्द्ध-चब्बिश अक्षर तार हय।
से अक्षर 'चन्द्र' हय, कृष्णे करि' उदय,
त्रिजगत् कैला काममय॥

(चै० च० म० २१/१२५)

अर्थात् कामगायत्री श्रीकृष्णका स्वरूप है। इस मन्त्रराजमें साढ़े चौबीस अक्षर हैं तथा इस मन्त्रका प्रत्येक अक्षर पूर्ण चन्द्र है। ये चन्द्रसमूह श्रीकृष्णको उदित कराकर त्रिजगत्को प्रेममय बना देते हैं।

इन पद्योंके प्रमाणसे कामगायत्रीमें साढ़े चौबीस अक्षर हैं, किन्तु कामगायत्रीमें कौन-सा अर्द्धाक्षर है, बहुत चिन्ता करनेपर भी श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती इसे न समझ सक
व्याकरण, पुराण, तन्त्र, नाट्य तथा अलङ्कार आदि शास्त्रोंमें विशेष रूपसे छानबीन करनेपर भी उन्हें कहीं भी अर्द्धाक्षरका उल्लेख प्राप्त नहीं हुआ। उन सभी शास्त्रोंक
और व्यंजनक
किन्तु कहीं भी अर्द्धाक्षरका कोई प्रमाण नहीं मिला। श्रील जीवगोस्वामी द्वारा रचित श्रीहरिनामामृत व्याकरणक
स्वर व्यंजनक
मातृकान्यास आदिमें भी मातृका रूपक
अर्द्धाक्षरका उल्लेख नहीं मिला। बृहन्नारदीयपुराणमें राधिकाक सहस्र-नाम-स्तोत्रमें वृन्दावनेश्वरी श्रीमती राधिकाजीको पचास वर्णरूपिणी कहा गया है। उसे देखकर श्रील चक्रवर्ती ठाकुरका सन्देह और भी बढ़ गया, उन्होंने सोचा कि क्या श्रील कविराज गोस्वामीने भ्रमवशतः ऐसा लिखा है? किन्तु उनमें भ्रम होनेकी सम्भावना नहीं है, क्योंकि वे भ्रम-प्रमादादि दोषोंसे सर्वथा रहित सर्वज्ञ हैं। यदि उक्त मन्त्रमें खण्ड 'त्' को अर्द्धाक्षर मानते हैं तो श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी
क्रमभङ्गक
किया है—

सखि हे, कृष्णमुख—द्विजराज–राज।
कृष्णवपु–सिंहासने, वसि' राज्य शासने,
करे सङ्गे चन्द्रेर समाज॥

दुइ गण्ड सुचिक्कण, जिनि' मणि–सुदर्पण,
सेइ दुइ पूर्णचन्द्र जानि।
ललाटे अष्टमी–इन्दु, ताहाते चन्दन–बिन्दु,
सेइ एक पूर्णचन्द्र मानि॥

करनख–चान्देर हाट, वंशी–उपर करे नाट,
तार गीत मुरलीर तान।
पदनख–चन्द्रगण, तले करे नर्त्तन,
नूपुरेर ध्वनि यार गान॥

(चै॰ च॰ म॰ २१/१२६–१२८)

श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामीने उक्त पङ्क्तियोंमें श्रीकृष्ण–
चन्द्रक
उनक
ऊपरी भागमें चन्दनबिन्दुको चौथा पूर्णचन्द्र माना है तथा
चन्दनबिन्दुक
अर्द्धचन्द्र बतलाया है। इस वर्णनक
अर्द्धाक्षर होता है, किन्तु खण्ड 'त्' को अर्द्धाक्षर माननेसे
अन्तिम अक्षर ही अर्द्धाक्षर होता है, पश्चम अक्षर अर्द्धाक्षर
नहीं हो पाता। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर अर्द्धाक्षरका
निर्णय न कर पानेक

उन्होंने विचार किया यदि मन्त्राक्षरकी स्फ
मन्त्रदेवताकी स्फ
देवताका दर्शन न होनेसे मर जाना ही अच्छा है। ऐसा सोचकर वे देहत्याग करनेकी अभिलाषासे रातमें राधाक
तटपर उपस्थित हुए। रात्रिका द्वितीय प्रहर व्यतीत होनेपर अकस्मात् तन्द्राकी स्थितिमें उन्होंने श्रीवृषभानुनन्दिनीका दर्शन किया। श्रीराधाजीने बड़े स्नेहसे कहा—"हे विश्वनाथ! हे हरिवल्लभ! खेद मत करो, श्रीकृष्णदास कविराजने जो कुछ लिखा है, वह परम सत्य है। मेरे अनुग्रहसे वे मेरे अन्तःकरणकी सभी भावनाओंको जानते हैं। उनक
तनिक भी सन्देह मत करना। कामगायत्री मेरी और मेरे प्राणवल्लभकी उपासनाका मन्त्र है। हमलोग मन्त्राक्षरक
भक्तोंक
दोनोंको कोई भी जाननेमें समर्थ नहीं है। 'वर्णागम-भास्वत्' नामक ग्रन्थमें अर्द्धाक्षरका निरूपण किया गया है, उसे देखकर ही श्रील कृष्णदास कविराजने कामगायत्रीका स्वरूप-निर्णय किया है। तुम उसे देखकर श्रद्धालुओंके उपकारक

स्वयं वृषभानुनन्दिनी श्रीमती राधिकाक
श्रवणकर श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर जग उठे और "हा राधे! हा राधे!" कहकर विलाप करने लगे। फिर धैर्य धारणकर उनकी आज्ञा पालनमें तत्पर हो गये। श्रीमती राधिकाने अर्द्धाक्षर निर्णय करनेक
था, उसक

अर्द्धाक्षर है। उसक
पूर्णचन्द्र हैं।

श्रीमती राधिकाजीकी कृपासे मन्त्रक
होकर श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरने अपने इष्टदेवका साक्षात् दर्शन किया तथा सिद्धदेहक
परिकरत्व प्राप्त किया। इसक
तटपर श्रीगोकुलानन्द नामक श्रीविग्रहकी प्रतिष्ठा की तथा वहींपर रहते समय श्रीवृन्दावनकी नित्यलीलाओंका माधुर्य अनुभवकर श्रील कविकर्णपूर द्वारा रचित श्रीआनन्दवृन्दावन–चम्पूः की सुखवर्त्तिनी नामक टीकाकी रचना की।

राधापरस्तीरकुटीरवर्त्तिनः प्राप्तव्यवृन्दावन चक्रवर्त्तिनः।
आनन्दचम्पू विवृतिप्रवर्त्तिनः सान्तो–गतिर्म्मे सुमहानिवर्त्तिनः॥

अपनी परिणत वयस (वृद्धावस्था) में श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर अन्तर्दशा और अर्द्धबाह्य दशामें रहकर भजन करनेमें ही अपना अधिकांश समय व्यतीत करने लगे। उनक
प्रधान शिष्य श्रीबलदेव विद्याभूषण ही उनक
शास्त्र–अध्यापनका कार्य करने लगे।

परकीयावादकी पुनर्स्थापना

श्रीधाम वृन्दावनमें षड्गोस्वामियोंका प्रभाव किञ्चित् क्षीण होनेपर स्वकीया और परकीयावादका मतभेद उठ खड़ा हुआ। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरने स्वकीयावादक
भ्रमको दूर करनेक

'गोपीप्रेमामृत' नामक ग्रन्थोंकी रचनाएँ कीं। तत्पश्चात् उन्होंने उज्ज्वलनीलमणिक
टीकामें शास्त्रीय प्रमाणों और अकाट्य युक्तियोंक
स्वकीयावादका खण्डनकर परकीया विचारकी स्थापना की है। श्रीमद्भागवतकी सारार्थदर्शिनी टीकामें भी उन्होंने परकीया भावकी पुष्टि की है।

ऐसा सुना जाता है कि श्रील विश्वनाथ चक्रवर्तीक समय कुछ पण्डितोंने परकीया उपासनाक
विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरका विरोध किया था, किन्तु श्रील चक्रवर्ती ठाकुरने अपनी प्रगाढ़ विद्वता तथा अकाट्य युक्तियोंक
पण्डितोंने उन्हें जानसे मारनेका सङ्कल्प किया। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर प्रतिदिन प्रातःकाल श्रीवृन्दावन-धामकी परिक्रमा करते थे। अतः उन्होंने प्रभातकालीन अन्धकारमें श्रीधाम वृन्दावनकी परिक्रमा करते समय श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरको किसी सघन अन्धकारपूर्ण क
चक्रवर्ती ठाकुरक
समीप पहुँचनेपर वहाँ विरोधियोंने श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरको मारना चाहा, किन्तु अकस्मात् देखा कि वे वहाँ नहीं थे। अपितु उनक
अपनी दो-तीन सहेलियोंक
ऐसा देखकर पण्डितोंने उस बालिकासे पूछा—"लाली! अभी-अभी एक महात्मा इधर आ रहे थे, वे किधर गये? क्या तुमने उन्हें देखा है?" बालिकाने उत्तर दिया—"देखा तो

था, परन्तु किस ओर गये मुझे मालूम नहीं।" बालिकाक
अद्भुत रूप–सौन्दर्य, कटाक्ष, भावभङ्गी और मन्द–मुस्कानको
देखकर पण्डित समाज मुग्ध हो गया। उनक
कल्मष दूर हो गया और उनका हृदय द्रवित हो गया।
पण्डितोंक
स्वामिनी श्रीमती राधिकाकी सहचरी हूँ। वे इस समय अपने
ससुराल यावटमें विराजमान हैं। उन्होंने मुझे पुष्पचयन
करनेक
गयीं और फिर पण्डितोंने उस बालिकाक
विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरको देखा। पण्डितोंने श्रील चक्रवर्ती
ठाकुरक
चक्रवर्ती ठाकुरने उन्हें क्षमा कर दिया। श्रील चक्रवर्ती
ठाकुरक
जाती हैं। इस प्रकार इन्होंने स्वकीयावादका खण्डनकर शुद्ध
परकीया विचारकी स्थापना की। इनका यह कार्य गौड़ीय–
वैष्णवोंक

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरने जिस प्रकारसे श्रीगौड़ीय–
वैष्णवधर्मकी मर्यादाकी रक्षाकर पुनः श्रीवृन्दावनमें श्रीगौड़ीय–
वैष्णवधर्मका प्रभाव स्थापित किया है, उसका विवेचन
करनेसे उनकी अलौकिक प्रतिभासे विस्मित होना पड़ता है।
उनक
एक श्लोक लिखा है—

विश्वस्य नाथरूपोऽसौ भक्तिवर्त्म प्रदर्शनात्।
भक्तचक्रे वर्त्तितत्त्वात् चक्रवर्त्त्याख्ययाभवत्॥

अर्थात् भक्तिपथक
नाथ अर्थात् विश्वनाथ हैं तथा शुद्धभक्तचक्र (भक्तमण्डली) में सदा अवस्थित रहनेक
नाम विश्वनाथ चक्रवर्ती हुआ है।

वे लगभग १६७६ शकाब्दमें लगभग एक सौ वर्षकी आयुमें माघी शुक्ला पञ्चमी तिथिको अपनी अन्तर्दशाकी अवस्थामें श्रीवृन्दावनमें अप्रकट हुए। आज भी श्रीधाम वृन्दावनमें श्रीगोकुलानन्द मन्दिरक
विराजमान है।

इन्होंने श्रील रूपगोस्वामीका पदाङ्क अनुसरणकर विपुल अप्राकृत भक्ति साहित्यका सृजनकर विश्वमें श्रीमन् महाप्रभुक मनोऽभीष्टको स्थापन किया है। साथ ही इन्होंने श्रीरूपानुग विरुद्ध क
गौड़ीय-वैष्णव जगत्में ये परमोज्ज्वल आचार्य तथा प्रामाणिक महाजनक
अप्राकृत कवि और अप्राकृत रसिकभक्त तीनों रूपोंमें ही विख्यात हैं। श्रीकृष्णदास नामक एक वैष्णव पदकर्त्ताने श्रील चक्रवर्ती ठाकुर द्वारा रचित माधुर्यकादम्बिनीक
उपसंहारमें लिखा है—

माधुर्यकादम्बिनी-ग्रन्थ जगत कैल धन्य।
चक्रवर्ती-मुखे वक्ता आपनि श्रीकृष्णचैतन्य॥

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरने 'माधुर्यकादम्बिनी' ग्रन्थकी रचनाकर समग्र जगत्को धन्य कर दिया। वास्तवमें

श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु ही इस ग्रन्थक
चक्रवर्तीक

क

कठिन ये तत्त्व सरल करिते प्रचार॥

कुछ लोगोंका कहना है कि श्रील चक्रवर्ती ठाकुर श्रील रूप गोस्वामीक
तत्त्वोंको सहज सरल रूपमें वर्णन करनेक
गोस्वामी ही पुनः श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक
अवतरित हुए हैं।

ओहे गुणनिधि श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती।
कि जानिब तोमार गुण मुञि मूढ़मति॥

अहो! गुणोंक
मैं अत्यन्त मूढ़ मतिवाला व्यक्ति क
सकता हूँ। (अतएव आप कृपाकर अपने अप्राकृत गुणोंको मेरे हृदयमें स्फूर्ति करायें—आपक
है।)

गौड़ीय-वैष्णवाचार्योंमें श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरकी भाँति अनेकानेक ग्रन्थोंक
हुए हैं। अभी भी साधारण वैष्णव समाजमें श्रील चक्रवर्ती ठाकुरक
है—"किरण-बिन्दु-कणा, एइ तीन निये वैष्णवपना।"

इन्होंने गौड़ीय-वैष्णव भक्तिसाहित्य-भण्डारकी अतुल-सम्पद्-स्वरूप जिन ग्रन्थों, टीकाओं और स्तवों आदिकी

रचनाएँ की हैं, नीचे उनकी तालिका प्रस्तुत की जा रही है—

(१) व्रजरीतिचिन्तामणि, (२) श्रीचमत्कारचन्द्रिका, (३) श्रीप्रेमसम्पुटः (खण्डकाव्यम्), (४) गीतावली, (५) सुबोधिनी (अलङ्कार-कौस्तुभ टीका), (६) आनन्दचन्द्रिका (उज्ज्वल-नीलमणि टीका), (७) श्रीगोपाल-तापनी टीका, (८) स्तवामृतलहरी धृत—(क) श्रीगुरुतत्त्वाष्टकम्, (ख) मन्त्रदातृ-गुरोरष्टकम्, (ग) परमगुरोरष्टकम्, (घ) परात्परगुरोरष्टकम्, (ङ) परमपरात्पर गुरोरष्टकम्, (च) श्रीलोकनाथाष्टकम्, (छ) श्रीशचीनन्दनाष्टकम्, (ज) श्रीस्वरूप-चरितामृतम्, (झ) श्रीस्वप्नविलासामृतम्, (ञ) श्रीगोपालदेवाष्टकम्, (ट) श्रीमदन-मोहनाष्टकम्, (ठ) श्रीगोविन्दाष्टकम्, (ड) श्रीगोपीनाथाष्टकम्, (ढ) श्रीगोक

श्रीराधाकुण्डाष्टकम्, (थ) जगन्मोहनाष्टकम्, (द) अनुरागवल्ली, (ध) श्रीवृन्दादेव्याष्टकम्, (न) श्रीराधिका-ध्यानामृतम्, (प) श्रीरूपचिन्तामणिः, (फ) श्रीनन्दीश्वराष्टकम्, (ब) श्रीवृन्दावन आष्टकम्, (भ) श्रीगोवर्धनाष्टकम्, (म) श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः, (य) श्रीनिक

कथामृतम् (आर्यशतकम्), (ल) श्रीश्यामकुण्डाष्टकम्। (९) श्रीकृष्णभावनामृतम् महाकाव्यम्, (१०) श्रीभागवतामृत-कणा, (११) श्रीउज्ज्वलनीलमणि-किरणः, (१२) श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु-बिन्दुः, (१३) रागवर्त्मचन्द्रिका, (१४) ऐश्वर्यकादम्बिनी (अप्राप्या), (१५) श्रीमाधुर्यकादम्बिनी, (१६) श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु टीका, (१७) श्रीआनन्दवृन्दावनचम्पूः टीका, (१८) दानक

टीका, (१९) श्रीललितमाधव नाटक टीका, (२०) श्रीचैतन्य-चरितामृत टीका (असम्पूर्ण), (२१) ब्रह्मसंहिता टीका, (२२) श्रीमद्भगवद्गीताकी 'सारार्थवर्षिणी' टीका, (२३) श्रीमद्भागवतकी 'सारार्थदर्शिनी' टीका।

परमाराध्य गुरुपादपद्म नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टरोत्तशत श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान क
हार्दिक अभिलाषा था कि हमारे गोस्वामियों एवं गुरुपरम्पराक
आचार्योंक
उन्नत भाषाओंमें प्रकाशित हो। मुझे दृढ़ विश्वास है कि आज वे श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक
'श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः' क
आनन्दित होंगे।

परमतत्त्वज्ञ एवं रसिकक
चक्रवर्ती ठाक
राधिकाकी दासीकी दासीकी दासी होनेक
कर रहे हैं। यह श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः हमारे तथा इस ग्रन्थका आश्रय लेनेवाले सभी पाठकोंक
उन्हें पूर्ण करें—यही मेरी एकमात्र अभिलाषा है। इसमें कोई भी सन्देह नहीं कि यह श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः हिन्दी भाषी पाठकोंक
ध्रुव तारेका काम करेगा।

इस ग्रन्थके प्रूफ-संशोधन आदिक
वेदान्त माधव महाराज, श्रीमान् विजयकृष्ण ब्रह्मचारी और बेटी रागलेखा दासी, कम्पोजिंग तथा ले-आउट आदिक

लिए श्रीमान् अच्युतानन्द ब्रह्मचारी, बेटी कृष्णवल्लभा दासी और बेटी शान्ति दासी तथा मुख पृष्ठक
श्रीमान् विकास ठाक
अत्यन्त सराहनीय और विशेष उल्लेखनीय है। श्रीश्रीगुरु-गौराङ्ग गान्धर्विका-गिरिधारी इनपर प्रचुर कृपाशीर्वाद वर्षण करें—उनक श्रीचरणोंमें यही प्रार्थना है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि भक्ति-पिपासु, रसिक और भावुक तथा व्रजरसक
इस ग्रन्थका समादर होगा। श्रद्धालुजन इस ग्रन्थका पाठकर श्रीचैतन्य महाप्रभुके प्रेमधर्ममें प्रवेश प्राप्त कर सकेंगे।

अन्तमें भगवत्-करुणाक
श्रील गुरुपादपद्म मेरे प्रति प्रचुर कृपा वर्षण करें, जिससे मैं उनकी मनोऽभीष्ट सेवामें अधिकाधिक अधिकार प्राप्त कर सकूँ—यही उनक
है।

शीघ्रतावश प्रकाशन हेतु इस ग्रन्थमें कुछ त्रुटियोंका रह जाना स्वाभाविक है। श्रद्धालु पाठकगण उसे संशोधन करक पाठ करेंगे और हमें सूचित करेंगे, जिससे कि अगले संस्करणमें हम उन त्रुटियोंका संशोधन कर सकें।

श्रीअन्नदा एकादशी तिथि
श्रीचैतन्याब्द ५२२
२७ अगस्त २००८

श्रीगुरु-वैष्णव दासानुदास
त्रिदण्डिभिक्षु
श्रीभक्तिवेदान्त नारायण

श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः

श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः

नमो वृन्दावनेश्वर्यै

वृन्दावनेश्वरि वयोगुणरूपलीला-
सौभाग्यक
दासी भवानि सुखयानि सदा सकान्ताम्
त्वामालिभिः परिवृतामिदमेव याचे॥१॥

भावानुवाद—हे वृन्दावनेश्वरि! हे वय (आयु), गुण, रूप, लीला, सौभाग्य, क
द्वारा परिवेष्टित रहनेवाली आपसे मैं यही याचना करता हूँ कि मैं आपकी दासी बनकर सेवाक
आपको सदैव सुख प्रदान कर पाऊँ॥१॥

प्रदोषान्ते अभिसारः

(रात्रिक

शृङ्गारयाणि भवतीमभिसारयाणि
वीक्ष्यैव कान्तवदनं परिवृत्य यान्तीम्।
धृत्वाञ्चलेन हरिसन्निधिमानयानि
संप्राप्य तर्जनसुधां सुखिता भवानि॥२॥

भावानुवाद—मैं आपका शृङ्गार आदि करक
सजाऊँगी तथा अभिसार कराऊँगी। (वाम्य स्वभाववशतः
जब) आप अपने कान्त श्रीकृष्णक
घूमकर खड़ी हो जायेंगी, तब मैं आपक
आपको उनक
डाँट-डपटरूपी अमृतकी वर्षा करेंगी, उसमें स्नान करक
आनन्दित होऊँगी॥२॥

पादे निपत्य शिरसानुनयानि रुष्टाम्
तं प्रत्यपाङ्ग-कलिकामपि चालयानि।
त्वद्दोर्द्वयेन सहसा परिरम्भयानि
रोमाञ्चकञ्चुकवतीमवलोकयानि ॥३॥

भावानुवाद—आपक
श्रीचरणकमलोंपर अपना मस्तक रखकर अनुनय-विनय करती
रहूँगी। श्रीकृष्णक
अपाङ्ग-कलिकाको चालित करवाऊँगी। (अर्थात् आपक
विकसित नेत्रकमल जो मानक

ऐसे हो गये हैं, मानो वे अपने आपमें सिमटी हुई कली हों, मैं अनुनय-विनय करक
कटाक्षपात करवाऊँगी।) सहसा आपक
उनका आलिङ्गन करवाऊँगी, जिससे आपका रोम-रोम खिल उठेगा—समस्त अङ्ग-प्रत्यङ्ग पुलकित हो उठेंगे। उस समय मैं आपकी उस अवस्थाको देख-देखकर परमानन्दित होऊँगी॥३॥

प्राणप्रिये क
मित्यच्युतोक्ति-मकरन्दरसं धयानि।
मा मुञ्च माधव सतीमिति गद्गदार्द्र
वाचा तवेत्य निकटं हरिमाक्षिपाणि॥४॥

भावानुवाद—श्रीकृष्ण आपसे कहेंगे—"हे प्राणप्रिये! तुम इस क
उक्तिरूपी मकरन्द रसका आस्वादन करूँगी तथा गद्गद और चित्तको द्रवीभूत कर देनेवाले वचनोंक
तुम इस सतीको छोड़ना नहीं, पकड़कर रखना"—ऐसा कहकर श्रीकृष्णको आपक

वामामुदस्य निजवक्षसि तेन रुद्धा-
मानन्द-बाष्प-तिमितां मुहुरुच्छलन्तीम्।
व्यस्तालकां स्खलितवेणिमबद्धनीवीम्
त्वां वीक्ष्य साधुजनुरेव कृतार्थयानि॥५॥

भावानुवाद—श्रीकृष्णक
बँध जाने (अर्थात् उनसे अलग होनेका प्रयास करनेपर भी
उनक
कारण नेत्रोंसे निरन्तर आनन्दाश्रु प्रवाहित करेंगी तथा आपक
अङ्गोंपर स्वेदकी बूँदें सुशोभित होंगी। आपकी अलकावली
इधर–उधर बिखर जायेगी, वेणि (चोटी) खुल जायेगी तथा
नीविका बन्धन ढीला पड़ जायेगा। आपको उस अवस्थामें
देखकर मैं अपने जन्मको सम्पूर्ण रूपसे कृतार्थ मानूँगी॥५॥

नक्तलीला

(निशा–लीला)

तल्पे मयैव रचिते बहुशिल्पभाजि
पौष्पे निवेश्य भवतीं न न नेतिवाचम्।
कृष्णं सुखेन रमयन्तमनन्तलीलम्
वातायनात्तनयनैव निभालयानि॥६॥

भावानुवाद—आपक
भी मेरे द्वारा रचित नाना प्रकारकी कलासे युक्त पुष्पोंकी
शय्यापर आपको स्थापित करक
क

स्थित्वा बहिर्व्यजन–यन्त्र–निबद्ध–डोरी–
पाणिर्विकर्षणवशान्मृदु वीजयानि।
उत्तुङ्ग–क
मालोपयानि मनितैः स्मितमाहराणि॥७॥

भावानुवाद—क
(पङ्खे) की डोरीको पकड़कर धीरे-धीरे खींचती रहूँगी। (इस
प्रकार बाहर बैठनेपर भी अपनी इस सेवाक
दोनोंक
क्रमशः दूर करूँगी तथा आप दोनोंक
मन्द हास्यकी मधुर ध्वनिको यत्नपूर्वक श्रवण करूँगी॥७॥

श्रीरूपमञ्जरिमुख-प्रियकिङ्करीणा-
मादेशमेव सततं शिरसा वहानि।
तेनैव हन्त तुलसीपरमानुकम्पा-
पात्री भवानि करवाणि सुखेन सेवाम्॥८॥

भावानुवाद—श्रीरूपमञ्जरी आदि मुख्य प्रियकिङ्करियोंक
आदेशको मैं अपने सिरपर धारण करूँगी। जिसक
तुलसीकी अत्यधिक कृपाकी पात्री बनकर सुखपूर्वक सेवा
करूँगी॥८॥

माल्यादि-हारकटकादिमृजी-विचित्र-
वर्ती-सितांशु-घुसृणागुरुचन्दनादि ।
वीटी-लवङ्ग-खपूरादि-युता सखीभिः
सार्द्धं मुदा विरचयानि कलाप्रकाशः॥९॥

भावानुवाद—माला आदि गुथूँगी, हार-कटक[१] आदि
अलङ्कारोंका मार्जन करूँगी, आपक [२]-भङ्गी

[१] मेखला, करधनी।
[२] कामदेवका प्रतीक मकर चिह्न।

आदिक
अगरु, चन्दन आदिका अनुलेपन प्रस्तुत करूँगी तथा पानक
पत्तोंमें चूना, कत्था, लवङ्ग और सुपारी आदि देकर
सखियोंक
अत्यधिक निपुणतापूर्वक ताम्बुलकी रचना) करूँगी॥९॥

त्वां स्रस्तवेशवसनाभरणां सकान्ताम्
वीक्ष्य प्रसाधनविधौ द्रुतमुद्यताभिः।
श्रीरूपरङ्गतुलसीरतिमञ्जरीभि-
र्दिष्टानयानि तव सम्मुखमेव तानि॥१०॥

भावानुवाद—(कन्दर्प युद्धक
वेश, वसन और आभरणोंको अस्त-व्यस्त देखकर उन
सबको पुनः यथायथ सजानेक
और रतिमञ्जरी आदि सखियोंक
पूर्वोक्त (अर्थात् श्लोक संख्या नौ में प्रस्तुत की गयी) सारी
साम्रगी आपक
आदि कर दूँगी॥१०॥

त्वामाशिखाचरणमूढ़विचित्रवेशाम्
स्प्रष्टुं पुनश्च धृततृष्णमवेक्ष्य कृष्णम्।
आयान्तमेव विकटभ्रुकुटी-विभङ्ग-
हुंकृत्युदञ्चितमुखी विनिवर्तयानि॥११॥

भावानुवाद—आपको शिखासे चरण तक विचित्र वेशयुक्त
देखकर सतृष्ण श्रीकृष्ण फिरसे आपका स्पर्श करनेक

आ रहे हैं, ऐसा देखकर मैं टेढ़ी-भ्रुक
करते हुए ऊपर मुख उठाकर उन्हें निषेध करूँगी॥११॥

तत्रेत्य विस्मयवतीं ललितां यदाह
साध्वीत्व-कन्टकविनिष्क्रमणाय देव्याः।
वृत्तं न्यषेधदयि मामियमेव धूर्त्ते-
त्युक्त्या हरेः स्वहृदयं रसयानि नित्यम्॥१२॥

भावानुवाद—विलासक
वेशको उपलक्ष करक
उपस्थित होनेवाली ललिता, श्रीराधिकाकी वेश-भूषामें किसी
प्रकारका विपर्यय (परिवर्त्तन) न देखकर अङ्ग-सङ्गक
सम्भावनासे विस्मित हो जायेंगी, उनक
श्रीकृष्ण कहेंगे—"अरी ललिते! मैं राधिका देवीक
कण्टकको निकालनेमें प्रवृत्त हुआ था, किन्तु (अङ्गुली द्वारा
मेरी ओर इङ्गित करक
श्रीकृष्णकी इस प्रकारकी उक्तियोंक
नित्य रसमय बनाया करूँगी॥१२॥

निष्क्रम्य क
कान्तैकबाहु-परिरब्धतनुं प्रयान्तीम्।
त्वामालिभिः सह कथोपकथा-प्रफ
वक्त्रामहं व्यजनपाणिरनुप्रयाणि॥१३॥

भावानुवाद—आप जब श्रीकृष्णकी एक भुजाको अपने
दोनों हाथोंसे आलिङ्गन करक

कन्धेपर रखकर वन विहारक
निकलेंगी, उस समय अपनी सखियोंक
करते समय आपका मुखकमल प्रफ
समय मैं भी अपने हाथमें व्यजन (पङ्खा) लेकर आपक
पीछे-पीछे चलती रहूँगी॥१३॥

गायानि ते गुणगणांस्तव वर्त्मगम्यम्
पुष्पास्तरैर्मृदुलयानि सुगन्धयानि।
सालीततिः प्रतिपदं सुमनोभिवृष्टीः
स्वामिन्यहं प्रतिदिशं तनवानि बाढ़म्॥१४॥

भावानुवाद—हे स्वामिनि! मैं आपक
करते-करते पुष्पोंसे निकाले गये इत्रसे आपक
मृदुल (कोमल) तथा सुगन्धित कर दूँगी। आप सखियों सहित जैसे-जैसे आगे बढ़ेंगी, मैं पद-पदपर प्रत्येक दिशामें पुष्पवृष्टिक

प्रेष्ठस्वपाणिकृतकौसुमहारकाञ्ची-
क
त्वां भूषयाणि पुनरात्मकवित्वपुष्पै-
रास्वादयानि रसिकालिततीरिमानि॥१५॥

भावानुवाद—श्रीकृष्ण द्वारा अपने हाथोंसे बनाये गये पुष्पोंक
और किरीट (मुक
अपने कवितारूपी पुष्पोंक

प्रियतम द्वारा पुष्प चयनसे लेकर पुष्पक
तथा आपको अपने ही हाथोंक
उनकी क्रिया-मुद्राओं, भाव-भङ्गिमा तथा आपक
हृदयमें अनुभव किये जानेवाले भावोंको कविताक
श्रवण कराकर आपको लज्जारूपी पुष्प द्वारा विभूषित
करूँगी) एवं इन समस्त कवित्व-रसिक सहचरियोंको
कविता-रसका आस्वादन कराऊँगी॥१५॥

चन्द्रांशुरूप्यसलिलैरवसिक्तरोध-
स्यञ्चत्-कदम्ब-सुरभावलिगीतकीर्त्तिम् ।
आरब्धरासरभसां हरिणा सह त्वाम्
त्वत्पाठितैव विदुषी कलयानि वीणाम्॥१६॥

भावानुवाद—चाँदीक
ज्योत्सनाक जल द्वारा सींचे हुए तथा कदम्ब-पुष्पोंकी
सुगन्धसे सुगन्धित पुलिनपर भौरोंक
होनेवाली आप जब श्रीहरिक
तब आपक
वीणा-वादन करूँगी॥१६॥

रासं समाप्य दयितेन समं सखीभि-
र्विश्रान्तिभाजि नवमालतिका-निक
त्वय्यानयामि रसवित्[१] करकाम्ररम्भा-
द्राक्षादिकानि सरसं परिवेशयानि॥१७॥

---
(१) रसवत् इति पाठान्तरम्।

भावानुवाद—रासक
लेकर श्रीकृष्णक
करेंगी, तब रसज्ञ मैं अनार, आम, क
सभी रसीले फल आपक
करूँगी॥१७॥

तल्पे सरोजदलक्लिप्त मनङ्गक
पर्याप्तमाप्तकलया रचिते तुलस्य।
त्वां प्रेयसा सह रसादधिशाययामि
ताम्बूलमाशयितुमुल्बनमुल्लसानि ॥१८॥

भावानुवाद—उस समय अनेक कलाओंमें निपुण तुलसीक
द्वारा अनङ्ग-क
रचना होगी। आपको श्रीकृष्णक
ताम्बूल अर्पण करते हुए मैं अत्यन्त उल्लसित होऊँगी॥१८॥

सम्वाहयानि चरणावलक
जिघ्राणि सौरभ-समूढ़-चमत्क्रियाब्धिः।
अक्ष्णोर्दधाम्युरसिजौ परिरम्भयाणि
चुम्बाम्यलक्षितमवेक्षितसौकुमार्या ॥१९॥

भावानुवाद—मैं आपक
सम्वाहन करूँगी तथा चमत्कृत होकर उनक
और मत्त कर देनेवाली उनसे निकलती सुगन्धिका आघ्राण
करूँगी। आपक
भावसे उनका चुम्बन करूँगी तथा अपने दोनों उरोजोंपर
धारण करक

निशान्त्यलीला

(निशान्त-लीला)

अन्ते निशन्तनुतरप्रसृतालकाल्या-
स्ताडङ्कहारततिगन्धवहाग्रमुक्ताः ।
प्रेष्ठस्य ते तव च संश्लथिता निभाल्य
तत्रानयानि परमाप्तसखीः प्रबोध्य॥२०॥

भावानुवाद—निशान्तक
आपक
आभूषण), हारसमूह और नासिकाक
अलङ्कारको क
स्थानपर परमप्रेष्ठ सखियोंको जगा करक

ता दर्शयानि सुखसिन्धुषु मज्जयानि
ताभ्यः प्रसादमतुलं सहसाप्नुवानि।
तन्नूपुरादिरणितैर्गतगाढ़निद्राम्
शय्योत्थितां सचकितां भवतीं भजामि॥२१॥

भावानुवाद—मैं उन परमप्रेष्ठ सखियोंको आप दोनोंकी
उस अवस्थाक
कराऊँगी। जिसक
कृपा प्राप्त करूँगी। उन सखियोंकी नूपुर आदिकी ध्वनिक
द्वारा आपकी गाढ़ निद्रा भङ्ग हो जायेगी। आप शय्यासे
उठकर सचकित होकर बैठ जायेंगी, उस समय मैं आपकी
सेवा करूँगी॥२१॥

हे स्वामिनि प्रियसखीत्रपयाक
कान्ताङ्गतस्तव वियोक्तुमपारयन्त्याः।
उद्ग्रन्थयाम्यलकक
ग्रन्थिं विचक्षणतयाङ्गुलिकौशलेन॥२२॥

भावानुवाद—हे स्वामिनि! प्रिय सखियोंको देखकर आप लज्जासे कातर होकर उठनेकी चेष्टा करनेपर भी श्रीकृष्णक
आभूषणोंमें क
अपने आपको प्रियतमक
जायेंगी। आपकी ऐसी अवस्था देखकर मैं सावधानीपूर्वक अपनी अङ्गुलियोंक
मुक्ता और माल्य-ग्रन्थि आदिको छुड़ा दूँगी॥२२॥

नासाग्रतः श्रुतियुगाच्च वियोजयानि
तद्भूषणं मणिसरांस्तु विसूत्रयाणि।
प्राणार्बुदादधिकमेव सदा तवैकम्
रोमापि देवि कलयानि कृतावधाना॥२३॥

भावानुवाद—आपक
कानोंसे क
हारोंको भी खोल दूँगी। आपक
(अरबों) प्राणोंसे भी अधिक प्रिय मानकर विशेष सावधानीपूर्वक सदैव आपकी सेवा करूँगी अर्थात् श्रीकृष्णक
आबद्ध आपक

त्वां सालिमात्मसदनं निभृतं व्रजन्तीम्
त्यक्त्वा हरेरनुपथं तदलक्षितोऽहम्।
तां खण्डितामनुनयन्तमवेक्ष्य चन्द्राम्
तद्वृत्तमालि-तति-संसदि वर्णयानि॥२४॥

भावानुवाद—जब आप सखियोंको लेकर अपने भवन यावटमें निभृत (गोपनीय) रूपसे जा रही होंगी, तब मैं आप लोगोंका सङ्ग छोड़कर अलक्षित भावसे श्रीकृष्णका अनुगमन करूँगी। खण्डिता चन्द्रावलीक
कर रहे हैं, ऐसा देखकर मैं लौट आऊँगी तथा सम्पूर्ण वृत्तान्त सखियोंकी सभामें वर्णन करूँगी॥२४॥

प्रातर्लीला

(प्रातःकालीन लीला)

प्रक्षालयानि वदनं सलिलैः सुगन्धै-
र्दन्तान् रसालजदलैस्तव धावयानि।
निर्णेजयानि रसनां तनुहेमपत्र्या
सन्दर्शयानि मुक

भावानुवाद—मैं सुगन्धित जलक
धुलाऊँगी। सुकोमल आमक
धावन कराऊँगी। पतली सुवर्णकी जीभी द्वारा आपकी जिह्वाको साफ कराऊँगी। निपुणताक
दर्पण आपको दिखाऊँगी॥२५॥

स्नानाय सूक्ष्म-वसनं परिधापयानि
हाराङ्गदाद्यपघनादवतारयाणि ।
अभ्यञ्जयाम्यरुणसौरभहृद्यतैलै-
रुद्वर्तयानि नवक

भावानुवाद—आपको स्नान करानेक
पहनाऊँगी। गलेसे हार आदिको खोलकर नीचे रख दूँगी।
अरुणवर्णक
सुगन्धित) तेल द्वारा आपका अभ्यञ्जन अर्थात् मालिश
करूँगी। नव-क
लेप द्वारा आपको उबटन लगाऊँगी॥२६॥

नीरैर्महासुरभिभिः स्नपयानि गात्रा-
दम्भांसि सूक्ष्म-वसनैरपसारयाणि।
क
दाशोषयाणि रभसेन सुगन्धयानि॥२७॥

भावानुवाद—अत्यन्त सुगन्धित जलक
स्नान कराऊँगी। सूक्ष्म वस्त्र द्वारा आपके श्रीअङ्गसे जलको
पोंछ दूँगी। आपक
सुगन्धित बना दूँगी॥२७॥

वासो मनोभिरुचितं परिधापयानि
सौवर्णकङ्कतिकया चिक
गुम्फामि वेणिममलैः क
मग्रेलसच्च्वमरिका-मणिजात-भान्तीम् ॥२८॥

भावानुवाद—आपक
वस्त्र पहनाऊँगी, स्वर्णक
संस्कार कर दूँगी तथा अनेक प्रकारक
अग्रभागमें अत्यधिक उज्ज्वल चमरीकी मणि[१]से सुशोभित वेणी गुथूँगी॥२८॥

चूड़ामणिं शिरसि मौक्तिकपत्रपाश्याम्
भाले विचित्रतिलकञ्च मुदा विरच्य।
अक्त्वाक्षिणी श्रुतियुगं मणिक
नासामलंकृतिमतीं करवाणि देवि॥२९॥

भावानुवाद—हे देवि! आपक [२] और मुक्ता पत्र पाश्या[३] धारण कराऊँगी। अत्यधिक आनन्दपूर्वक आपक
दोनों नेत्रोंको काजल द्वारा और दोनों कानोंको मणि-क
द्वारा सुशोभित करूँगी तथा नासिकाको भी अलंकृत कर दूँगी॥२९॥

गण्डद्वये मकरिक
कस्तूरिक

---

[१] मुक्ता आदि रत्नोंक
पुष्पोंक
[२] सिरपर धारण किये जानेवाला आभूषण।
[३] मुक्ताओंसे बनी हुई लड़ी।

बाह्वोस्तवाङ्गदयुगं मणिबन्धयुग्मे
चूड़ां मसारकलितां कलयानि यत्नात्॥३०॥

भावानुवाद—आपक [1], चिबुक (ठोड़ी) पर कस्तूरीका बिन्दु तथा दोनों उरोजोंपर चित्र अङ्कित कर दूँगी। आपकी दोनों भुजाओंमें अङ्गद (बाजूबन्द) युगल तथा मणिबन्धद्वय (दोनों कलाइयों) में इन्द्रनीलमणिसे बनी चूड़ियाँ यत्नपूर्वक पहनाऊँगी॥३०॥

पाण्यङ्गुलीः कनकरत्नमयोर्मिकाभि-
रभ्यर्चयानि हृदयं पदकोत्तमेन।
मुक्तोतकञ्चुलिकयोरसिजौ विचित्र-
माल्येन हारनिचयेन च कण्ठदेशम्॥३१॥

भावानुवाद—रत्नोंसे जड़ी हुई सोनेकी अँगूठियों द्वारा आपक
आपक
(हृददेश), मुक्ताओंसे जड़ी हुई कञ्चुलिका द्वारा आपक
स्तन तथा विचित्र प्रकारकी मालाओं और हारसमूहक
आपक

काञ्च्या नितम्बमथ हंसकनूपुराभ्याम्
पादाम्बुजे दलततिं क्वणदङ्गुरीयैः।
लाक्षारसैररुणमप्यनुरञ्जयानि
हे देवि तत्तलयुगं कृतपुण्यपुञ्जा॥३२॥

---

[1] कामदेवका प्रतीक मकर चिह्न।

भावानुवाद—हे देवि! राशि-राशि पुण्य करनेवाली मैं, आपके नितम्बको काञ्ची (कटिभूषण) द्वारा, दोनों चरणकमलोंको मधुर शब्द करनेवाले हंसक नूपुरक
छोटे-छोटे घुँघरूओंवाली अङ्गुठियों (बिछुओं) द्वारा तथा आपक
करूँगी॥३२॥

अङ्गानि साहजिक-सौरभयन्त्यथापि
देव्यर्चयानि नवक
लीलाम्बुजं करतले तव धारयाणि
त्वां दर्शयानि मणिदर्पणमर्पयित्वा॥३३॥

भावानुवाद—हे देवि! आपक
सौरभ द्वारा सुगन्धित होनेपर भी मैं नव-क ुमक
आपका अर्चन करूँगी। आपक
बाद मणियोंक
आपको आपका ही स्वरूप दिखलाऊँगी॥३३॥

सौन्दर्यमद्भुतमवेक्ष्य निजं स्वकान्त-
नेत्रालि-लोभनमवेत्य विलोलगात्रीम्।
प्राणार्बुदेन विधुवर्तिकदीपक
निर्मञ्छयानि नयनाम्बुनिमज्जिताङ्गी॥३४॥

भावानुवाद—नेत्ररूपी मधुकरको आकर्षितकर लेनेवाले अपने कान्तक
विकारोंमेंसे अन्यतम कम्पनक

हो जायेंगी। (ऐसी अवस्थामें मेरा क्या कर्त्तव्य है, ठीकसे निर्णय नहीं कर पानेक
भीगे हुए अङ्गोंवाली होनेपर भी अपने अर्बुद (अरबों) प्राणोंक
उतारूँगी॥३४॥

गोष्ठेश्वरी–प्रहितया सह क
प्रभातिक–प्रियतमाशन–साधनाय ।
यान्तीं समं प्रियसखीभिरनुप्रयाणि
ताम्बूल–सम्पुट–मणिव्यजनादि–पाणिः ॥३५॥

भावानुवाद—गोष्ठेश्वरी श्रीयशोदाजीक
साथ प्रियतम श्रीकृष्णक
प्रस्तुत करनेक
जायेंगी। मैं उस समय ताम्बूलकी पिटारी और मणि–व्यजन (पङ्खा) आदि हाथमें लेकर आपक
रहूँगी॥३५॥

गोष्ठेश्वरी–सदनमेत्य पदे प्रणम्य
तस्यास्तदाप्तभविकां त्रपयावृताङ्गीम्।
घ्रातां तया शिरसि तन्नयनाम्बुसिक्ताम्
त्वां वीक्ष्य तामपि मुदा प्रणमामि भक्त्या॥३६॥

भावानुवाद—गोष्ठेश्वरीक
उनक
आवृत हो जायेंगी। गोष्ठेश्वरी आपक

आशीर्वाद करेंगी तथा आपको अपने नेत्रोंक
देंगी। आपक
भी परमानन्दित होकर उन्हें भक्तिपूर्वक प्रणाम करूँगी॥३६॥

मूर्त्तं तपोपि वृषभानुक
गेहस्य मेऽसि तनयस्य च मे वराङ्गि।
नैरुज्यदास्यमृत-पाणिरभूर्वरेण
दुर्वाससो यदिति तद्वचसा हसानि॥३७॥

भावानुवाद—श्रीयशोदाजी कहेंगी—हे राधे! तुम मूर्त्तिमती (साक्षात्) तपस्याकी मूर्त्ति होनेपर भी, वृषभानुक
घर तथा मेरे पुत्रकी भाग्य स्वरूप हो। हे सुन्दर अङ्गोंवाली! तुम दुर्वासाक
अमृतसे भी अधिक पुष्टिकारक खाद्य-द्रव्य बनानेवाली और (उन हाथोंक
आयुवर्द्धक द्रव्योंका सेवन करनेवाले, पक्षान्तरमें उन हाथोंक स्पर्शमात्रसे अमृतक
विरहरूपी तापसे मुक्त हो जानेवाले) श्रीकृष्णको आरोग्यता प्रदान करनेवाली बन गयी हो। श्रीयशोदाजीकी इन बातोंको सुनकर मुझे हँसी आ जायेगी॥३७॥

स्नातानुलिप्त-वपुषो दयितस्य तावत्
तात्कालिक मधुरिमण्यतिलोलिताक्षीम्।
स्वामिन्यवेत्य भवतीं क्वचनप्रदेशे
तत्रैव क

भावानुवाद—हे स्वामिनि! श्रीकृष्ण उस समय स्नान करक
सुशोभित होंगे। आप भी उस समय उनकी शोभाको देखकर उनक
श्रीकृष्णकी माधुरीका पान करानेक
आपको नन्दभवनक

प्रक्षालयानि चरणौ भवदङ्गतः स्र-
ङ्माल्यादिपाकरचनानुपयोगि यत्तत्।
उत्तारयाणि तदिदं तु तवास्त्विति त्वद्
वाचोल्लसामि विकसन्मधुमाधवीव॥३९॥

भावानुवाद—थोड़ी देरक
धुलवाकर आपक
अनुपयोगी हार-माला आदि उतार दूँगी। आप उस समय कहेंगी—"मैंने यह हार-मालादि तुम्हें दिये।" ऐसा सुनकर मेरा चित्त मधुमासक

पक्त्वा स्थितां मधुरपायसशाकसूप-
भाजीप्रभृत्यमृतनिन्दिचतुर्विधान्नम् ।
त्वां लोकयानि न न नेति मुहुर्वदन्तीम्
गोष्ठेशयापि परिवेशयितुं निदिष्टाम्॥४०॥

भावानुवाद—जब आप अमृतको भी निन्दित कर देनेवाले मधुर पायस (दूधकी बनी खीर, रबड़ी आदि वस्तुएँ), शाक, सूप (रसेदार सब्जियाँ, चटनी), भाजी

(चावल, पूड़ी, रोटी) आदि चार प्रकारक[१] भोजन बना चुकी होंगी, तब गोष्ठेश्वरी आपको भोजन परोसनेक आदेश करेंगी। तब ना ना ना—ऐसा कहनेवाली आपको मैं देखती रहूँगी॥४०॥

तृप्त्युत्थितां प्रियतमाङ्गरुचिं धयन्त्या
वातायनार्पितदृशः सहसोल्लसन्त्याः।
आनन्दजद्युतितरङ्गभरे मनोज-
मञ्जूकृते तव मनो मम मज्जयानि॥४१॥

भावानुवाद—भोजन करनेक अङ्गोंकी शोभाका पान करनेवाली आप झरोखेंमें नेत्र अर्पणकर अर्थात् झरोखेंमेंसे प्रियतमको देखकर सहसा उल्लसित हो उठेंगी। उस समय आपकी आनन्दसे उत्पन्न लावण्य-प्रवाहविशिष्ट और कन्दर्पभावसे भूषित अवस्थामें मैं अपने चित्तको निमज्जित करूँगी॥४१॥

राधे तवैव गृहमेतदहञ्च जाते
सूनोः शुभे किमपरां भवतीमवैमि।
तद्वीक्ष सम्मुखमिति व्रजपा गिरा त्वद्-
वक्त्रं स्मितं स्वहृदयं रसयानि नित्यम्॥४२॥

भावानुवाद—श्रीयशोदाजी कहेंगी—"हे राधे! यह घर तुम्हारा है और मैं भी तुम्हारी हूँ। मेरे पुत्रका मङ्गल तुम्हारे

---

[१] चर्व्य (चबाकर खाये जानेवाले), चुष्य (चूसकर खाये जानेवाले), लेह्य (चाटकर खाये जानेवाले) और पेय (पीनेवाले)।

द्वारा हो रहा है, इसलिए और अधिक क्या कहूँ? हे पुत्री! तुम मेरे सामने भोजन करो।" यह बात सुनकर आपक सरल मुखकमलपर मृदु-मन्द मुस्कान उदित होगी। उसमें मैं नित्यरस अनुभव करूँगी॥४२॥

पूर्वाह्णलीला

(दिनक

यान्तं वनाय सखिभिः सममात्मकान्तम्
पित्रादिभिः सरुदितैरनुगम्यमानम्।
वीक्ष्याप्त-गौरवगृहां दिननाथपूजा-
व्याजेन लब्धगहनां भवतीं भजामि॥४३॥

भावानुवाद—जब आपक
साथ वनकी ओर जायेंगे, तब उनके पीछे-पीछे पिता (श्रीनन्द) आदि रोते-रोते गमन करेंगे। यह सब दृश्य देखते हुए आप अपने घर यावट पहुँचेंगी तथा वहाँसे सूर्यपूजाक छलसे वनकी ओर गमन करेंगी। उस समय मैं भी आपका भजन करूँगी अर्थात् आपकी तत्कालोचित सेवा करनेक उद्देश्यसे मैं भी वन गमन करूँगी॥४३॥

मध्याह्नलीला

(दोपहरमें होनेवाली लीला)

कान्तं विलोक्य क
मादाय पत्रपुटिकामनुयाम्यहं त्वाम्।

का तस्करीयमिति तद्वचसा न कापी–
त्युक्त्या[१] तदर्पितदृशं भवतीं स्मरामि॥४४॥

भावानुवाद—कान्तको देखकर जब आप झूठ–मूठमें पुष्पचयन करने लग जायेंगी, तब मैं पत्तोंसे बनी हुई फ
श्रीकृष्ण कहेंगे—"यह तस्करी (चोरी करनेवाली) कौन है?" उसक
दृष्टि अर्पण करनेवाली आपको मैं स्मरण करूँगी अर्थात् आपक
आपकी शरण लूँगी॥४४॥

पुष्पाणि दर्शय कियन्ति हृतानि चौरी–
त्युक्तौ च पुष्प–पुटिकामपि गोपयानि।
तद्वीक्ष्य हन्त मम कक्षतले क्षिपन्तम्
पाणिं बलात्तमभिमृश्य भवानि दूना॥४५॥

भावानुवाद—मेरी ओर देखते हुए श्रीकृष्ण कहेंगे—"दिखाओ, तुम लोगोंने कितने पुष्प चोरी किये हैं।" उनक
सुनकर मैं फ
श्रीकृष्ण मेरे कक्ष (बगल) में बलपूर्वक हस्त अर्पण करेंगे। उससे मैं दुःखी हो जाऊँगी॥४५॥

रक्षाद्य देवि कृपया निजदासिकां मा–
मित्युच्च–कातरगिरा शरणं व्रजामि।

---

(१) त्युक्त्वा वा पाठः।

कि
बाहुं करेण तुदतीं भवतीं श्रयामि॥४६॥

भावानुवाद—उस समय मैं कातर स्वरसे पुकार उठूँगी—"हे देवि! कृपा करक
मैं आपकी शरण लेती हूँ।" (आप तर्जन-गर्जन करते हुए श्रीकृष्णसे कहेंगी)—"हे धूर्त्त! मेरी निजजनको दुःख क्यों दे रहे हो," ऐसा कहकर आप अपने हाथोंसे श्रीकृष्णकी भुजाओंसे मुझे छुड़ाने लगेंगी। आपको उस भावसे युक्त देखकर मैं आपका आश्रय ग्रहण करूँगी॥४६॥

त्यक्त्वैव मां भवदुरः कवचं विखण्डय
प्राप्तां स्रजं तव गलात् स्वगले निधाय।
पुष्पाणि चौरि मम कि
स्त्वत्कण्ठमेव रभसं परिपीड़यामि॥४७॥

भावानुवाद—तब श्रीकृष्ण मुझे छोड़कर आपके वक्ष कवच अर्थात् कञ्चुली अथवा आपकी साड़ीक
विखण्डित करक
माला लेकर अपने गलेमें पहन लेंगे और कहेंगे—"हे चौरि! मेरे ये पुष्प क्या तुम्हारे कण्ठकी शोभाको बढ़ानेक
प्रस्फ
युक्त श्रीकृष्ण आपक
देखो! तुम्हारे इस दोषक
बलपूर्वक पीड़ित कर रहा हूँ॥"४७॥

राजास्ति कन्दरतले चल तत्र धूर्त्ते
तस्याज्ञयैव सहसैव विवस्त्रयिष्ये।
त्वां वीक्ष्य हृष्यति स वै निजदिव्यमुक्ता-
मालां प्रदास्यति ललाटतटे मदीये॥४८॥

भावानुवाद—"हे धूर्त्ते! इस कन्दराकी तलहटीमें राजा बैठा हुआ है, उसक
मैं सहसा तुम्हें निर्वस्त्र करूँगा। तुम्हारी वैसा अवस्थाको देखकर वे निश्चित रूपसे सन्तुष्ट होंगे तथा मेरे ललाटपर दिव्य मुक्तामाला अर्पण करेंगे॥"४८॥

दोषो न ते व्रजपतेस्तनयोपि तस्य
दुष्टस्य यन्नरपतेः खलु सेवकोभूः।
त्वद्बुद्धिरीदृगभवन्मम चात्र साधवी
भाले किमेतदभवल्लिखितं विधात्रा॥४९॥

भावानुवाद—श्रीकृष्णकी ऐसी बातें सुनकर आप उनका उपहास करते हुए कहेंगी—"हे व्रजेन्द्रनन्दन! ऐसी बातें कहनेमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है, क्योंकि तुम तो दुष्ट कन्दर्प राजाक
सङ्क
दुर्बुद्धि और मेरी ऐसी सुबुद्धि क
गयी ही मानती हूँ॥"४९॥

इत्यादि वाङ्मयसुधामहह श्रुतिभ्याम्
प्रेम्ना[१] पिबान्युदरपूरमथेक्षणाभ्याम्।

[१] प्रेम्ना ददामि इति वा पाठः।

रूपामृतं तव सकान्ततया विलास–
सीधुञ्च देवि वितराम्यथमादयानि॥५०॥

भावानुवाद—मैं आपकी ऐसी वाणीरूपी सुधाको अपने कानोंक
भरपेट पान करूँगी। आपक
विलासामृतको सखियोंक
आनन्दित करूँगी॥५०॥

प्रेष्ठे सरस्यभिनवैः क
हिन्दोलिकां प्रियतमेन सहाधिरूढाम्।
त्वां दोलयान्यथ किरामि परागराजी–
र्गायानि चारुमहतीमपि वादयानि॥५१॥

भावानुवाद—आपक
पुष्पोंक
साथ आपको चढ़ाकर झुलाऊँगी। आप दोनोंपर परागसमूहका वर्षण करूँगी, सुन्दर गीत गाऊँगी तथा वीणा आदि वाद्य बजाऊँगी॥५१॥

वृन्दावने सुर–महीरुहयोगपीठे
सिंहासने स्व–रमणेन विराजमानाम्।
पाद्यार्घ्यधूप–विधूदीप–चतुर्विधान्न–
स्रग्भूषणादिभिरहं परिपूजयानि॥५२॥

भावानुवाद—जिस समय आप श्रीवृन्दावनमें कल्प–
वृक्षक

विराजित होंगी, तब मैं पाद्य, अर्घ्य, कर्पूर-दीप, चतुर्विध अन्न और माला-भूषण आदिक
करूँगी ॥५२॥

गोवर्धने मधुवनेषु मधूत्सवेन
विद्रावित-त्रपसखीशतवाहिनीकाम् ।
पिष्टातयुद्धमनुकान्तजयाय यान्तीम्
त्वां ग्राहयाणि नवजातुषक

भावानुवाद—जब गोवर्धनक
उत्सव, होली) क
सखियोंकी सेनासे युक्त होकर कान्तपर विजय प्राप्त करनेक
अभिप्रायसे रङ्गोंसे भरी पिचकारीक
मैं आपको लाक्षासे निर्मित क ुमकी क
करूँगी ॥५३॥

अग्रेस्थितोस्मि तव निश्चलवक्ष एव
उद्घाटय कन्दुकचयं क्षिपचेद्बलिष्ठा।
उद्घाटय कञ्चुकमुरः किल दर्शयन्ती
त्वं चापि तिष्ठ यदि ते हृदि वीरतास्ति ॥५४॥

भावानुवाद—श्रीकृष्ण आपसे कहेंगे—"(पिचकारी द्वारा तेज धारसे रङ्गयुक्त जलक
होगा?) तुम्हारे सम्मुख मैं अपना वक्षःस्थल खोलकर खड़ा हूँ, अब यदि तुम्हारेमें सामर्थ्य हो तो तुम कन्दुकचय (अर्थात् स्तनमण्डल) को उद्घाटित करक

आघात करो।” आप अपने कञ्चुकमुक्त वक्षको दिखलाकर कहेंगी, यदि तुम्हारे हृदयमें वीरता हो, तो ठहरो॥५४॥

यत् कथ्यते तदयमेव तव स्वभावो
यत् पूर्वजन्मनि भवानजितः किलासीत्।
मिथ्यैव तद्यदिह भोः कतिशोजितोभूः
मत्किङ्करीभिरपि तद्विगतत्रपोसि॥५५॥

भावानुवाद—(आपक
कहेंगे—“हाँ-हाँ! आओ! आओ! आगे बढ़ो तो सही।” तब
उनक
वीरताका अहङ्कार करते हुए जो कुछ कह रहे हो, वह तुम्हारा स्वभाव है अर्थात् अपनी प्रशंसा करते हुए डींग-हाँकना तुम्हारा स्वभाव है। यद्यपि हमने पौर्णमासीक मुखसे सुना है कि तुम पूर्वजन्ममें अजित नामसे आविर्भूत हुए थे, किन्तु हमें यह बात सम्पूर्ण रूपसे मिथ्या प्रतीत होती है। क्योंकि हे श्रीकृष्ण! मेरी किङ्करियोंने ही तुम्हें कितनी बार पराजित किया है। तब भी तुम अब निर्लज्ज होकर इस प्रकारका गर्व कर रहे हो॥५५॥

इत्येवमुत्पुलकिनी कलयानि वाचम्
शिञ्जानकङ्कणरणत्कृतदुन्दुभीकम् ।
युद्धं मुखामुखि रदारदि चारुबाहा-
बाहव्य मन्दनखरानखरि स्तुवानि॥५६॥

भावानुवाद—उस समय आप दोनोंकी ऐसी बातें श्रवणकर मेरा रोम-रोम खिल उठेगा। नूपुरक
कङ्कणक
जो मुखामुखि, दन्तादन्ति, हाथाहाथि तथा नखानखि युद्ध होगा, मैं उस युद्धका स्तव करूँगी अर्थात् उसका सखी समाजमें पुनः वर्णन करूँगी॥५६॥

कस्याञ्चिदद्रिनृप-दीव्यदुपत्यकायाम्
सप्रेयसि त्वयि सखीशतवेष्टितायाम्।
विश्रान्तिभाजि वनदेवतयोपनीता-
नीष्टानि सीधुचषकानि पुरो दधानि॥५७॥

भावानुवाद—गिरिराज गोवर्द्धनक
स्थानपर (किसी घाटीमें) श्रीकृष्णाक
घिरी हुई आप जब विश्राम करेंगी, तब मैं वन देवताक
लाये गये अभिलषित अमृत और मधुपानके सभी पात्रोंको आपक

हा कि
धा धा ध धावति भयाद्विविवृक्षपुञ्जः।
भी भी भि भीरुरहमत्र कथं जिजीवा-
म्येवं लगिष्यसि यदा दयितस्य कण्ठे॥५८॥

भावानुवाद—आप मधुपानसे मत्त होकर "हा हा धरणी (पृथ्वी) घूम रही है, वृक्षसमूह भयसे भाग रहे हैं। मैं बहुत

भयभीत हो रही हूँ। अब क
प्रियतमक
लेंगी॥५८॥

त्वत् स्वामिनी प्रलपतीयमिमां गदेन
हीनां करोमि कलया तदितः प्रयाहि।
इत्युक्तिसीधुरसतर्पितहृत्तदैव
निष्क्रम्य जालविततौ निदधानि नेत्रे॥५९॥

भावानुवाद—उस समय श्रीकृष्ण मुझसे कहेंगे—"तुम्हारी स्वामिनी मधुमत्त होकर प्रलाप कर रही हैं। मैं चुम्बन, आलिङ्गन आदि कलाविलाससे इसे रोगहीन करूँगा। तुम यदि यहाँसे चली जाओ, तो अच्छा होगा।" श्रीकृष्णक
उक्तिरूपी अमृत-रससे मेरा हृदय तृप्त हो जायेगा और मैं बाहर निकलकर क
नेत्र अर्पित करूँगी अर्थात् झरोखेंमेंसे श्रीकृष्णकी क्रियाओंका अवलोकन करूँगी॥५९॥

घ्राणाक्षिकर्णवदने जलसेकनीत्या
कृष्णस्त्वया जित इतः सहसा निमज्य।
ग्राहो भवन् सखलु यत् क
जानाम्यहं तव मुखाम्बुजमेव वीक्ष्य॥६०॥

भावानुवाद—जल विहारक
और मुखमें जल-सेंचन नीतिक
श्रीकृष्ण, सहसा जलमें मग्न होकर मगरमच्छक

करेंगे, आपक
जाऊँगी ॥६०॥

अभ्यञ्जयानि ससखीदयितां सहालि-
स्त्वां स्नापयानि वसनाभरणैर्विचित्रम्।
शृङ्गारयाणि मणिमन्दिरपुष्पतल्पे
संभोजयानि करकाद्यथ शापयानि ॥६१॥

भावानुवाद—सखियोंक
मालिश करूँगी। सखियोंकी परमप्रिय आपको मैं स्नान कराऊँगी। विचित्र वस्त्र-आभूषण द्वारा मैं आपको विभूषित करूँगी। अनार आदि फल खिलाकर मणिमन्दिरमें पुष्प शय्यापर शयन कराऊँगी ॥६१॥

वानीरक
निह्नुत्य मृग्यसि कथं तदितः परत्र।
सत्यामिमां मम गिरं तमविश्वसन्तम्
यान्तं प्रदर्श्य भवतीमतिहर्षयाणि ॥६२॥

भावानुवाद—लुकाछिपी खेल खेलते-खेलते श्रीकृष्ण
जब आपको (उसी क
जिसक
सफल मनोरथ नहीं हो पानेक
निकलकर जब किसी दूसरे स्थानकी ओर जानेक
उद्यत होकर वे इधर-उधर देखते हुए आपको) ढूँढ़ेंगे, तब
मैं उनसे कहूँगी "हे कृष्ण! देवी इसी वानीर क

निक
क्यों ढूँढ़ रहे हैं?" मेरे द्वारा यह सत्य बात कहनेपर भी श्रीकृष्ण उसपर विश्वास न कर अन्यत्र चले जायेंगे। उनकी ऐसी अवस्थाको दिखलाकर मैं आपको आनन्दित करूँगी॥६२॥

स्वामिन्यमुत्र हरिरस्ति कदम्बक
निह्नुत्य मृग्यसि कथं तदितः परत्र।
सत्यामिमां ममगिरं खलु विश्वसन्त्याः
पाणौ जयं तव नयानि तमाप्नुवन्त्याः॥६३॥

भावानुवाद—आप जब श्रीकृष्णको ढूँढ़ रही होंगी, तब मैं कहूँगी "हे स्वामिनि! श्रीकृष्ण इस कदम्बक
हैं, आप इस स्थानको छोड़कर उन्हें अन्यत्र क्यों ढूँढ़ रही हैं।" मैं इस विषयमें सत्य कह रही हूँ, ऐसा जानकर आप मेरी बातपर विश्वास करेंगी। (इस प्रकार) मैं आपको विजयी बनाऊँगी अर्थात् लुकाछिपीक
होगी॥६३॥

राधे जिता च जयिनी च पणं न दातु–
मादातुमप्यहह चुम्बनमीशिषे त्वम्।
नाश्लेषचुम्बनमधुराधरपानतोऽन्यत्
द्यूतेग्लहं रसविदः प्रवरं वदन्ति॥६४॥

भावानुवाद—हे राधे! पाशा खेलमें मुखचुम्बनरूपी पण (बाजी) रहे। तुम पराजित होनेपर विजयी मुझ (श्रीकृष्ण) को यह पण देना और तुम विजयी होनेपर मुझसे इस पणको

ग्रहण करना। (श्रीकृष्णक
प्रसन्न होनेपर भी जब आप बाहरसे उनकी अवहेलना करती हुई कहेंगी—इस व्यर्थक
अपना समय नष्ट करनेकी क्या आवश्यकता है। तब आपकी ऐसी बातें सुनकर श्रीकृष्ण कहेंगे—) इसमें असहमत क्यों हो रही हो? देखो, रसज्ञ पण्डितजन कहते हैं कि द्यूत-क्रीड़ामें आलिङ्गन, चुम्बन और मधुर-अधर पानक
अतिरिक्त अन्य श्रेष्ठपण और कुछ हो ही नहीं सकता॥६४॥

गोवर्द्धने हि मम कापि सखी पुलिन्द-
कन्यास्ति भृंग्यतितरां निपुणेदृशेऽर्थे।
मद्ग्राह्यदेयपणवस्तुनि मन्नियुक्ता
सा ते ग्रहीष्यति च दास्यति चोपगूहम्॥६५॥

भावानुवाद—श्रीकृष्णक
सहमति देते हुए कहेंगी—"ठीक है! यदि तुम्हारी इस पणमें इतनी ही रुचि है, तो सुनो। इस गोवर्द्धनमें एक भृङ्गी नामक पुलिन्द कन्या मेरी सखी है, वह इस प्रकारक
निपुण है तथा इस प्रकारक
मेरे द्वारा ग्रहण करने और देने योग्य पणक
द्वारा नियुक्त होकर (परिस्थितिक
आलिङ्गन प्रदान भी करेगी तथा तुमसे ग्रहण भी करेगी॥"६५॥

उक्त्वेत्थमात्मदयितं प्रतिवक्ष्यसे माम्
याहीत्यथोत्पुलकिनी द्रुतपादपाता।

तामानयान्युपमुक
तं लज्जयानि सुमुखीरतिहासयानि॥६६॥

भावानुवाद—श्रीकृष्णको ऐसा कहकर आप उस पुलिन्द कन्याको लानेक
शीघ्र उसे लाकर मुक
मुखकी ओर दिखा-दिखाकर) सुमुखी सखियोंको हसाऊँगी तथा श्रीकृष्णको लज्जित करूँगी॥६६॥

स्वया किल व्रजपुरे मुरली तवैका
प्राभून्नतामपि भवानवितुं स्वभार्य्याम्।
सा लम्पटापि भवतोऽधरसीधुसिक्ता-
प्यन्यं पुमांसमिह मृग्यति चित्रमेतत्॥६७॥

भावानुवाद—(श्रीकृष्ण भृङ्गीको देखते ही चुम्बन-पणको त्यागकर मुरलीका पण करनेकी बात करेंगे, किन्तु अपनी मुरलीको ढूँढ़ नहीं पायेंगे, क्योंकि उसे तो आप पहले ही छिपा देंगी। श्रीकृष्णकी वंशीक
समय सखियाँ उलाहना देते हुए कहेंगी) "हे कृष्ण! इस व्रजपुरमें मुरली ही तुम्हारी एकमात्र स्वकीया पत्नी है। तुम अपनी पत्नीकी भी रक्षा करनेमें असमर्थ हो। साथ ही वह भी लम्पट है, क्योंकि तुम्हारे अधरसुधासे सिक्त होकर भी अन्य पुरुषको ढूँढ़ रही है। यह बड़ी विचित्र बात है॥"६७॥

वंशीं सतीं गुणवतीं सुभगां द्विषन्त्यो-
ऽसाध्व्यो भवत्य इह तत् समतामलब्ध्वा।

तां क्वापि बन्धमनयंस्तदहं भुजाभ्याम्
बद्ध्वैव वः शिखरिगह्वरगाः करोमि॥६८॥

भावानुवाद—सखियोंक
कहेंगे—"मेरी वंशी सती, गुणवती और सौभाग्यवती है। तुम असाध्वी हो, उसक
कर रही हो। उसे तुममेंसे ही किसीने कहींपर बन्द कर दिया है अर्थात् छिपा दिया है। इसलिए मैं भी तुम सबको दोनों भुजाओंक

इत्यागतं हरिमवेक्ष्य रहस्त्वदीय-
कक्षादहं मुरलिकां सहसा गृहीत्वा।
तां गोपयानि तदलक्षितमेव चित्र-
पुष्पेषुसङ्गररसां कलयानि च त्वाम्॥६९॥

भावानुवाद—इस प्रकार कहनेवाले श्रीहरिको आपकी ओर आते देखकर मैं चुपचाप आपक
या फिर बगल) से मुरलीको सहसा ग्रहण करक
बिना दिखाये ही कही और छिपा करक
विषय बनाऊँगी॥६९॥

ब्रह्मन्निमामनुगृहाण भवन्तमेव
भास्वन्तमर्चयितुमिच्छति मे स्नुषेयम्।
इत्यार्यया प्रणमितां धृतविप्रवेशे
कृष्णेऽर्पिताञ्च भवतीं स्मितभाग्भजानि॥७०॥

भावानुवाद—जटिलाक
ब्राह्मणके वेशमें उपस्थित होंगे। जटिला उन्हें कहेंगी—"हे ब्राह्मण! मेरी इस पुत्रवधुपर कृपा कीजिये। यह सूर्यरूपी आपकी पूजा करनेकी इच्छा करती है अर्थात् यह सूर्यदेवकी पूजा करनेक
चाहती है"—ऐसा कहकर वे आपक
श्रीकृष्णको प्रणाम करायेंगी तथा आपको उन श्रीकृष्णके प्रति अर्पित करेंगी। यह सब देखकर मैं मन्द-मन्द मुस्कराऊँगी॥७०॥

अपराह्णलीला

(दोपहरक

यान्तीं गृहं स्वगुरुनिघ्नतयातिलौल्यात्
कान्तावलोकनकृते मिषमामृशन्तीम्।
दूरेऽनुयानि यदतोऽनुविवर्तितास्या-
मेहीति वक्ष्यसि तदास्यरुचो धयन्तीम्॥७१॥

भावानुवाद—सूर्यपूजाक
भयसे अत्यधिक व्याक
तथा (जाते-जाते एक बार फिरसे) कान्तका अवलोकन करनेक
(आपक
क
(मुझे अपने साथ न आता देखकर आप मुझे बुलानेक
बहाने पीछे मुड़कर फिरसे कान्तक

आपकी शोभाका दर्शन करनेवाली मुझे, आप 'आओ! आओ!' कहकर बुलाने लगेंगी॥७१॥

गेहागतां विरहिणीं नवपुष्पतल्पे
त्वां शाययानि परतः किलमुर्मुराभात्।
तस्मात् परत्र शयनं विसपुञ्जक्लिप्त-
मध्यासयानि विधुचन्दन-पङ्कलिप्ताम्॥७२॥

भावानुवाद—यद्यपि घर पहुँचनेपर कृष्णविरहिणी आपको मैं नवपुष्पोंसे बनी शय्यापर शयन कराऊँगी, तथापि यह देखकर कि वह शय्या तो (आपक

तुषानलक

ही आपको कर्पूर-चन्दनका लेप लगाकर मृणालपुञ्ज-रचित (कमलकी नालोंको एकत्रित करक

शयन कराऊँगी॥७२॥

आकर्ण्य चन्दनकला क थितं व्रजेशा-
सन्देशमुत्सुकमतेः सहसा सहाल्याः।
सायन्तनाशनकृते दयितस्य नव्य-
कर्पूरक

लम्पामि चुल्लिमथ तत्र कटाहमच्छ-
मारोहयाणि दहनं रचयानि दीप्तम्।
नीराज्यखण्ड-कदली-मरिचेन्दुसीरि-
गोधूम-चूर्ण-मुख-वस्तु समानयानि॥७४॥

भावानुवाद—चन्दनकला सखीके

व्रजेश्वरीके

सखियोंके

नव्य-कर्पूरके

प्रस्तुत करनेके

चूल्हेको गोबर आदिके

साफ-सुथरी कढ़ाई रखकर अग्नि प्रज्वलित कर दूँगी। जल, घी, शक

गिरि तथा आटा, सूजी, मैदा आदि आपके

रख दूँगी॥७३-७४॥

अत्यद्भुतं मलयजद्रवसेचनेन
वृद्धिं जगाम यदिदं विरहानलौजः।
कर्पूरक
ज्वालैव शन्तिमनयत्तदिति ब्रवीमि॥७५॥

भावानुवाद—मैं (परिहास करते हुए) आपको इस प्रकार कहूँगी—"मलयज चन्दनके

शक्ति वर्धित हो रही थी, वह कर्पूरके

हेतु उठी प्रज्वलित अग्निकी ज्वालाके

यह बड़ी अद्भुत बात है॥"७५॥

धूलिर्गवां दिशमरुन्धहरेः सहम्बा-
रावोत्युदन्तमतुलं मधुपाययानि।
तत्पानसम्मद-निरस्तसमस्तकृत्याम्
त्वामुत्थितां सहगणामभिसारयाणि॥७६॥

भावानुवाद—'हम्बा-हम्बा' शब्द करते हुए आती हुई श्रीकृष्णकी गैयाओंक
ढक दिया है। मैं इस संवादरूपी अतुलनीय मधुका आपको पान कराऊँगी। उस मधुको पान करते ही आप समस्त कार्योंको परित्याग करक
उस समय मैं आपको अभिसार कराऊँगी॥७६॥

तत्कृष्णवर्त्म निकटस्थलमानयानि
निर्वापयाणि विरहानलमुन्नतं ते।
आयत एष इति वल्लिनिगूढ़गात्री-
माकृष्य मह्यमहहेश्वरि कोपयानि॥७७॥

भावानुवाद—मैं आपको श्रीकृष्णक
मार्गक
शान्त कराऊँगी (जिसे आपने गोष्ठेश्वरी श्रीयशोदाक
और श्रीकृष्णक
भुला दिया था।) श्रीकृष्णक
लताकी ओटमें छिप जायेंगी। मैं जब बलपूर्वक खींचकर आपको श्रीकृष्णक
मेरे प्रति क्रोध करेंगी॥७७॥

श्रीकृष्णदृङ्मधुलिहा भवदास्यपद्म-
माघ्रापयाण्यतितृषन्तवद्दृक्चकोरीम् ।
तद्वक्त्रचन्द्रविकसत्-स्मितधारयैव
संजीवयानि मधुरिम्नि निमज्जयानि॥७८॥

भावानुवाद—उस समय मैं श्रीकृष्णक
आपक
विमल मन्द-हास्य अमृतधारामें आपकी अत्यधिक तृष्णार्त्त (प्यासी) लोचनचकोरीको सञ्जीवित करक
निमग्न हो जाऊँगी॥७८॥

सायंलीला

(सन्ध्याक

वैवश्यमस्य तव चाद्भुतमीक्षयाणि
त्वामानयानि सदनं ललितानिदेशात्।
कर्पूरक
गोष्ठेश्वरीमनुसराणि समं सखीभिः॥७९॥

भावानुवाद—मैं आपकी और श्रीकृष्णकी विवशताका दर्शन करूँगी। श्रीललिताजीक
तथा कर्पूरक
लिए सखियोंक

गत्वा प्रणम्य तव शं कथयानि देवि
पृष्टा तयाथ वटकावलिमर्पयित्वा।
तां हर्षयाणि भवदद्भुत-सद्गुणाली-
स्तत्कीर्तिताः स्ववयसे शृणवानि हृष्टा॥८०॥

भावानुवाद—हे देवि! वहाँ जाकर श्रीयशोदा मैयाको प्रणाम करक

जानेपर आपक
परमानन्दित करूँगी। जब वे आपकी अद्भुत सद्गुणावलीका
अपने समान आयुवाली गोपियोंक
मैं प्रसन्नचित्त होकर उसे श्रवण करूँगी॥८०॥

वीक्ष्यागतं तनयमुन्नतसम्भ्रमोर्मि-
मग्नां स्तनाक्षि-पयसामभिषिच्य पूरैः।
अभ्यञ्जनादिकृतये निजदासिकास्ता
माञ्चापि तां निदिशतीं मनसा स्तुवानि॥८१॥

भावानुवाद—अपने पुत्रको आते देखकर जो श्रीयशोदा मैया अत्यन्त सम्भ्रमकी लहरमें निमग्न होकर अर्थात् आनन्दित होकर प्रीतिपूर्वक स्तनक
द्वारा श्रीकृष्णको अभिषिक्त करेंगी तथा सुगन्धित तेलक
श्रीकृष्णकी मालिश करनेक
आदेश करेंगी। मैं उन यशोदा मैयाका मन-ही-मन स्तव करूँगी॥८१॥

स्नानानुलेप-वसनाभरणैर्विचित्र-
शोभस्य मित्रसहितस्य तया जनन्या।
स्नेहेन साधु बहुभोजितपायितस्य
तस्यावशेषितमलक्षितमाददानि ॥८२॥

भावानुवाद—जब श्रीकृष्ण स्नान करनेके बाद चन्दन और विचित्र वस्त्र-आभूषणोंक
यशोदा मैया जब श्रीकृष्णको स्नेहपूर्वक खिला-पिला देंगी,

तब श्रीकृष्णक
करूँगी॥८२॥

तेनैव कान्तविरहज्वरभेषजेन
तात्कालिक
आगत्य साधु शिशिरी करवाणि शीघ्रम्
त्वन्नेत्रकर्णरसनाहृदयानि देवि॥८३॥

भावानुवाद—हे देवि! तात्कालिक कान्त-विरहरूपी ज्वरकी औषधस्वरूप उनक
(पथ्यस्वरूप) श्रीकृष्णक
प्रिय संवादक
शीघ्र ही शीतल करूँगी॥८३॥

स्नानाय पावनतड़ागजले निमग्नाम्
तीर्थान्तरे तु निजबन्धुवृतो जलस्थः।
संमज्य तत्र जलमध्यत एत्य स त्वा-
मालिंग्य तत्र गत एव समुत्थितः स्यात्॥८४॥

भावानुवाद—स्नान करनेक
जलमें निमग्न होंगी, तब श्रीकृष्ण भी दूसरे घाटपर अपने सखाओंसे घिरकर जलमें उतरेंगे। (आपको आनन्दित करनेक लिए श्रीकृष्ण बहाना ढूँढ़ते-ढूँढ़ते अपने सखाओंसे कहने लगेंगे—"आज देखें, कौन सबसे अधिक बलशाली है तथा इसका निर्णय इससे होगा कि कौन सबसे अधिक समय तक जलक
हुए अनेक सखाओंक

लगानेवाले) श्रीकृष्ण जलमें निमग्न होकर आपको आलिङ्गन करक

तन्नो विदुर्निकटगा अपि ते ननन्दृ-
श्वश्रादयो न किल तस्य सहोदराद्याः।
ज्ञात्वाहमुत्पुलकितैव सहालिरेत-
च्चातुर्यमेत्य ललितां प्रतिवर्णयानि॥८५॥

भावानुवाद—यद्यपि यह बात आपक
ननन्द और सास आदि तथा दूसरे तटपर खड़े हुए श्रीकृष्णक
(तथापि आपक
इस बातको जान जाऊँगी तथा श्रीकृष्णकी इस चतुरतासे रोमाञ्चित होकर सखियोंक
सबक

उद्यानमध्यवलभीमधिरुह्य तत्र
वातायनार्पितदृशं भवतीं विधाय।
सन्दर्श्य ते प्रियतमं सुरभीर्दुहान-
मानन्दवारिधिमहोर्मिषु मज्जयानि॥८६॥

भावानुवाद—(स्नानक
आयेंगी तथा श्रीकृष्ण भी गो-दोहनक
किसी बहानेसे) उद्यानमें छतक (१)

(१) छतक
आनन्द उठाया जा सक

में आपको चढ़ाकर झरोखेंमें आपक
अर्थात् आपको दूरसे गोशालाका दृश्य दिखाऊँगी। आप श्रीकृष्णको गो-दोहन करते देखकर आनन्दरूपी समुद्रकी विशाल लहरीमें डूब जायेंगी॥८६॥

गत्वा मुक
गोष्ठेशया तवदशां निभृतं निवेद्य।
सङ्क
त्वां ज्ञापयान्ययितदुत्कलिकाक

भावानुवाद—गोष्ठेश्वरीक
शयन करानेक
आपकी अवस्थाक
विषयमें जानकारी प्राप्तकर लौट करक
श्रीकृष्णकी उत्कण्ठा आदिका वर्णन करूँगी॥८७॥

प्रदोषलीला

(सायंकालक

त्वां शुक्लकृष्णरजनी-सरसाभिसार-
योग्यैर्विचित्रवसनाभरणैर्विभूष्य ।
प्रापय्य कल्पतरुक
कान्तेन तेन सह ते कलयानि क

भावानुवाद—आपको शुक्ल और कृष्ण पक्षकी रात्रिक
अनुसार अभिसार योग्य विचित्र वस्त्र-आभूषणोंक

विभूषित करक
अनङ्गसिन्धुमें क्रीड़ा करवाऊँगी॥८८॥

अथ प्रार्थना

हे श्रीतुलस्युरुकृपाद्युतरङ्गिणी त्वम्
यन्मूर्ध्नि मे चरणपङ्कजमादधाः स्वम्।
यच्चाहमप्यपिबमम्बु मनाक् त्वदीयम्
तन्मे मनस्युदयमेति मनोरथोऽयम्॥८९॥

भावानुवाद—हे तुलसि! हे अत्यधिक कृपाकी तरङ्गिणि! आपने अपने चरणकमल मेरे सिरपर कृपापूर्वक अर्पित किये हैं। मैंने भी आपक
किया है। इसीलिए यह सब मनोरथ मेरे चित्तमें उदित हुए हैं॥८९॥

क्वाहं परःशतनिकृत्यनुविद्धचेताः
सङ्कल्प एष सहसा क्व सुदुर्लभार्थे।
एका कृपैव तव मामजहत्युपाधि–
शून्यैवमन्तुमदधत्यगतेर्गतिर्मे ॥९०॥

भावानुवाद—कहाँ तो शठता आदि सैकड़ों दोषोंसे युक्त चित्तवाला मैं और कहाँ सहसा ऐसे दुर्लभ विषयसे सम्बन्धित सङ्कल्प! इस विषयमें अगतिकी गति स्वरूप हे तुलसि! आप ही मेरी एकमात्र गति हैं। आपकी निरुपाधिक कृपाने मेरे अपराधोंको ग्रहण न कर मुझे ग्रहण किया है॥९०॥

हे रङ्गमञ्जरि क
हे प्रेममञ्जरि किरात्र कृपादृशं स्वाम्।
मामानय स्वपदमेव विलासमञ्ज-
र्यालीजनैः सममुरीक

भावानुवाद—हे रङ्गमञ्जरि! मुझे अपनी कृपा प्रदान कीजिये। हे प्रेममञ्जरि! आप मेरे प्रति कृपादृष्टि कीजिये। हे विलासमञ्जरि! मुझे अपने चरणकमलोंकी ओर आकर्षित करक
अङ्गीकार कीजिये॥९१॥

हे मञ्जुलालि निजनाथपदाब्जसेवा-
सातत्यसम्पदतुलासि मयि प्रसीद।
तुभ्यं नमोऽस्तु गुणमञ्जरि मां दयस्व
मामुद्धरस्व रसिक

भावानुवाद—हे मञ्जुलालि! आप अपने नाथक श्रीचरणकमलोंकी निरन्तरकी जानेवाली सेवारूपी सम्पदमें अतुलनीय हैं। आप मेरे प्रति प्रसन्न हों। हे गुणमञ्जरि! मैं आपको नमस्कार करती हूँ। मुझपर दया कीजिये। हे सुरसिक रसमञ्जरि! आप मेरा उद्धार कीजिये॥९२॥

हे भानुमत्यनुपम-प्रणयाब्धि-मग्ना
स्वस्वामिनोस्त्वमसि मां पदवीं नय स्वाम्।
प्रेमप्रवाहपतितासि लवङ्गमञ्ज-
र्यात्मीयतामृतमयीं मयि धेहि दृष्टिम्॥९३॥

भावानुवाद—हे भानुमति! आप श्रीश्रीराधाकृष्णक
प्रणय समुद्रमें मग्न हैं। आप मुझे अपनी पदवी अर्थात् अपने जैसी सेवा करनेक
आप प्रेमरूपी प्रवाहमें पड़ी हुई हैं, कृपया आत्मीयतारूपी अमृतमयी दृष्टि मुझपर भी डालिये॥९३॥

हे रूपमञ्जरि सदासि निक
क
त्वद्दत्तदृष्टिरपि यत् समकल्पयं तत्-
सिद्धौ तवैव करुणा प्रभुतामुपैतु॥९४॥

भावानुवाद—हे रूपमञ्जरि! आप निक
विलासशील युगलकिशोर श्रीश्रीराधाकृष्णक
कलारूपी रसकी चित्रित चित्तवृत्ति हैं। आपकी ओर देखते हुए अर्थात् आपकी कृपा प्राप्तिकी आशाक
सङ्कल्प किया है, उसकी सिद्धिक
करुणाकी प्रभुता (वैभव) प्राप्त हो॥९४॥

राधाङ्गशश्वदुपगूहनतस्तदाप्त-
धर्मद्वयेन तनुचित्तधृतेन देव।
गौरो दयानिधिरभूरपि नन्दसूनो
तन्मेमनोरथलतां सफलीक

भावानुवाद—हे नन्दनन्दन! श्रीराधाक
आलिङ्गन करते-करते उनक
धर्मोंक

(गौररूपमें) दयानिधिक
मनोरथरूपी लताको सफल कीजिये॥९५॥

श्रीराधिकागिरिभृतौ ललिता-प्रसाद-
लभ्याविति व्रजवने महतीं प्रसिद्धिम्।
श्रुत्वाश्रयाणि ललिते तवपादपद्मम्
कारुण्यरञ्जितदृशं मयि हा निधेहि॥९६॥

भावानुवाद—इस व्रजवनमें यह विशेष रूपसे प्रसिद्ध है कि श्रीश्रीराधागिरिधर क
होते हैं। ऐसा सुनकर, हे ललिते! मैंने आपक
आश्रय लिया है। आप अपनी करुणा द्वारा रञ्जित दृष्टि मुझपर अर्पित कीजिये॥९६॥

त्वं नामरूपगुणशील-वयोभिरैक्याद्
राधेव भासि सुदृशां सदसि प्रसिद्धा।
आगः शतान्यगणयन्त्यररीक
तन्मां वराङ्गि निरूपाधि-कृपे विशाखे॥९७॥

भावानुवाद—हे सुन्दर अङ्गोंवाली! अहैतुकी कृपामयी विशाखे! यह सदैव प्रसिद्ध ही है कि आप व्रजसुन्दरियोंक समक्ष अपने नाम (अनुराधा), रूप, गुण, स्वभाव और वयस (आयु) में श्रीराधाक
सैकड़ों-सैकड़ों अपराधोंको न गिनकर मुझे स्वीकार कीजिये॥९७॥

हे प्रेमसम्पदतुला व्रजनव्ययूनोः
प्राणाधिक-प्रियसख-प्रियनर्मसख्यः ।

युष्माकमेव चरणाब्जरजोभिषेकम्
साक्षादवाप्य सफलोऽस्तु ममैव मूर्द्धा॥९८॥

भावानुवाद—हे व्रजक
प्रेम–सम्पदक
प्रियनर्म सखियो! ऐसी कृपा कीजिये, जिससे आप सभीक
चरणकमलोंकी रजक
मेरा मस्तक (अथवा सङ्कल्प) सफल हो॥९८॥

वृन्दावनीयमुक
गोवर्धनाचलगुरो हरिदासवर्य।
त्वत्सन्निधिस्थितिजुषो मम हृत्शिलास्व–
प्येता मनोरथलताः सहसोद्भवन्तु॥९९॥

भावानुवाद—वृन्दावनक
सेव्य, हरिदासवर्य, पर्वतरूपी गुरु गोवर्द्धन! आपक
निवास करनेवाला जो मैं हूँ, मेरे हृदयरूपी शिलामें ये सब
मनोरथ लताएँ सहसा समृद्धियुक्त हों॥९९॥

श्रीराधया सम तदीय सरोवर त्वत्
तीरे वसानि समये च भजानि संस्थाम्।
त्वन्नीरपानजनिता ममतर्यवल्यः
पाल्यास्त्वया क

भावानुवाद—हे श्रीराधाक
उनक
तटपर वास करूँ तथा वहीं अन्तिम अवस्थाको प्राप्त करूँ।

आपक
ही क

वृन्दावनीयसुरपादपयोगपीठ
स्वस्मिन् बलादिह निवासयसि स्वयं यत्।
तन्मे त्वदीय तलतस्थुष एव सर्व
सङ्कल्पसिद्धिमपि साधु क

भावानुवाद—हे वृन्दावनीय कल्पतरु! हे योगपीठ! आप सभीने बलपूर्वक मुझे इस स्थानपर वास कराया है, अतएव अपनी सतहपर निवास करनेवाले व्यक्तिक
सङ्कल्पोंकी सुन्दर रूपसे शीघ्र सिद्धि कीजिये॥१०१॥

वृन्दावनस्थिरचरान् परिपालयित्रि
वृन्दे तयो रसिकयो रतिसौभगेन।
आढ्यासि तत् कुरु कृपां गणना यथैव
श्रीराधिकापरिजनेषु ममापि सिध्येत्॥१०२॥

भावानुवाद—हे वृन्दे! आप वृन्दावनक
प्राणियोंका पालन करनेवाली हैं। रसिक श्रीश्रीराधाकृष्णक अत्यधिक अनुरागरूपी सौभाग्यमें धनी हैं। आप मुझपर ऐसी कृपा कीजिये, जिससे श्रीराधिकाक
हो॥१०२॥

वृन्दावनावनिपते जय सोम-सोम-
मौले सनन्दन-सनातन-नारदेड्य।
गोपेश्वरव्रजविलासि-युगाङ्घ्रिपद्मे
प्रीतिं प्रयच्छ नितरां निरुपाधिकां मे॥१०३॥

भावानुवाद—हे वृन्दावनावनिपते (हे वृन्दावन भूमिक राजा)! हे उमापति! हे सोममौले (चन्द्रको सिरपर धारण करनेवाले)! हे सनन्दन, सनातन, नारदजीक
गोपेश्वर! मुझे व्रजविलासी श्रीश्रीराधाकृष्णक
निरुपाधिक प्रेम प्रदान कीजिये॥१०३॥

हित्वान्याः किल वासना भज सखे वृन्दावनं प्रेमदम्
राधाकृष्णविलासवारिधिरसास्वादं परं विन्दसि।
तल्लब्धुं यदि कामना झटिति ते चेतः समुद्वर्त्तते,
विस्रब्धः सततं समाश्रय दृढं सङ्कल्पकल्पद्रुमम्॥१०४॥

इति श्रीस्वरूप-रूप-रघुनाथ-कृष्णदास-नरोत्तम रणानुवर्त्ति रसिक
विरचितं श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमं समाप्तम्।

भावानुवाद—सखे (हे मेरे हृदयकी वृत्तियों, पक्षान्तरमें हे साधक जीवो)! यदि श्रीश्रीराधाकृष्णक
रसास्वादन ही तुम्हारा प्रयोजन है, तथा यदि तुम उसे प्राप्त करनेकी अभिलाषा कर रहे हो तो अन्य समस्त वासनाओंका परित्याग करक
भजन करो। और यदि तुम्हारी इस रसास्वादनको शीघ्र प्राप्त करनेकी वासना प्रबल हो, तो फिर विश्वासपूर्वक दृढ़ भावसे मेरे इस सङ्कल्पकल्पद्रुमका आश्रय करो॥१०४॥

इति श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज द्वारा किया गया श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः का भावानुवाद समाप्त।

श्रीरास रासेश्वरी राधाजी

दण्डात्मिका (दण्डक[१] अनुसार) सेवा

दिवालीला

प्रातःकाले उठिया श्रीराधा ठाक
दन्तधावनादि क्रिया करिला आपनि॥१॥

प्रातःकाल उठकर श्रीराधा ठाक
दन्तधावन आदि करती हैं॥१॥

उद्वर्त्तनादि दिया सखी कराइल स्नान।
तबे वेशभूषा कराइल परिधान॥२॥

उसक
कराती हैं तथा फिर उन्हें वेश-भूषा धारण कराती हैं॥२॥

एइ कार्ये श्रीमतीर एक दण्ड जाय।
उत्कण्ठित चित्त कृष्ण दर्शन आशाय॥३॥

इतना करनेमें श्रीमती राधाजीका एक-दण्ड व्यतीत हो जाता है तथा उनका चित्त श्रीकृष्णका दर्शन करनेकी आशासे उत्कण्ठित हो उठता है॥३॥

कृष्ण लागि रन्धन करिते नन्दीश्वर।
पथे याइते एक दण्ड हय अतःपर॥४॥

इसके उपरान्त श्रीकृष्णक
नन्दीश्वर (नन्दभवन) जाते-जाते उनका एक-दण्ड और व्यतीत हो जाता है॥४॥

---

(१) एक दण्ड = २४ मिनट

दुइ दण्ड काल जाय रन्धन क्रियाय।
आर दण्ड जाय कृष्ण भोजन लीलाय॥५॥

भोजन बनानेमें उनका दो-दण्डका समय व्यतीत हो जाता है तथा और एक-दण्ड श्रीकृष्णक
दर्शनमें लग जाता है॥५॥

अष्टम दण्डेते राधार प्रसाद सेवन।
अवशेष पाइल तबे सर्व सखीगण॥६॥

आठवें-दण्डमें श्रीराधाजी प्रसाद सेवन करती हैं तथा फिर सभी सखियाँ उनका अवशेष ग्रहण करती हैं॥६॥

अष्ट दण्डोत्तरे कृष्णेर गोष्ठयात्रा हय।
दश दण्डे जान राधा आपन आलय॥७॥

आठवें-दण्डक
है, (जिसका दर्शन करनेमें श्रीमती राधाजीका एक-दण्ड व्यतीत हो जाता है) दसवें-दण्डमें राधाजी अपने घर चली जाती हैं॥७॥

एकादश दण्डे राधा श्वश्रु आज्ञा लइया।
सूर्यपूजासज्ज क

ग्यारहवें-दण्डमें श्रीराधाजी अपनी सास जटिलाकी आज्ञा लेकर अत्यन्त व्याक
सजाती हैं॥८॥

तिन दण्ड सूर्यकुण्ड जाइते जाय काल।
सूर्येर मन्दिरे राखे पूजाद्रव्यजाल॥९॥

सूर्यक

समय लग जाता है। वहाँ पहुँचकर वे (क

आदिको दिखानेक

सूर्यमन्दिरमें रख देती हैं॥९॥

पुष्प तुलिवारे जाय सखीगण लइया।
राधाक

इसक

करनेक

दर्शनक

दुइ दण्ड जाय राई निज क
श्रीकृष्णे दर्शन क

अपने क

को दो-दण्ड लग जाते हैं तथा वहाँ पहुँचकर वे अपनी क

श्रीकृष्ण प्रणाम करि मालाचन्दन दिला।
देह प्रेमे गरगर आनन्द बाड़िला॥१२॥

श्रीकृष्णको प्रणाम करक

आदि देती हैं। उस समय उनकी देह प्रेमसे आप्लावित हो जाती है तथा उनका आनन्द वर्द्धित हो जाता है॥१२॥

तबे नाना कौतुक करिला दुईजन।
हिन्दोलाय दुँहे दुले आनन्दित मन॥१३॥

उसक

प्रकारकी कौतुकपूर्ण लीलाएँ करते हैं और फिर मनमें अत्यन्त आनन्दित होते हुए झूला झूलते हैं॥१३॥

सखीगण लइया तबे करे रसक
क

उसक

क

कृष्ण हारिलेन खेलिते राई सने।
कृष्ण बले बिकाइलाम तोमार चरणे॥१५॥

राईक

कहते हैं—हे राधे! मैं तुम्हारे चरणोंमें बिक गया हूँ॥१५॥

तबे कृष्ण मिष्ठ अन्न भोजन करिला।
सखीगण लइया राई अवशेष पाइला॥१६॥

(उनक

हृदय द्रवीभूत हो जाता है तथा वे सखियोंको इङ्गित द्वारा

क

लेकर आती हैं, तब श्रीमती राधिका स्वयं अपने करकमलोंसे

उसे श्रीकृष्णक

राधिकाकी मुख-माधुरीका पान करते-करते) श्रीकृष्ण मिष्ठान्न भोजन करते हैं तथा श्रीमती राधिका सखियों सहित श्रीकृष्णका अवशेष ग्रहण करती हैं॥१६॥

तबे दुँहे प्रवेशिला श्रीमणिमन्दिरे।
रसेर विलास क

इसक
चित्तसे रस-विलास करते हैं॥१७॥

एरूपे विलासरसे जाय छय दण्ड।
बाईश दण्ड उत्तरे राई जान निज क

इस प्रकार विलास-रसमें छह-दण्ड व्यतीत हो जाते हैं, और बाईसवें-दण्डक
जाती हैं॥१८॥

दुई दण्ड सूर्यालये करिते गमने।
तबे एक दण्ड हय सूर्य आराधने॥१९॥

वहाँसे सूर्यमन्दिर जानेमें उन्हें दो-दण्ड लग जाते हैं और फिर वहाँपर एक-दण्ड सूर्यकी आराधनामें लग जाता है॥१९॥

तदन्तरे सखी सङ्गे राई गृहे जान।
पथे चारि दण्ड लागे करिते प्रयाण॥२०॥

उसक
रास्तेमें चलते-चलते चार-दण्ड लग जाते हैं॥२०॥

गृहे गिया राई तबे स्नान समापिया।
सूर्येर प्रसाद पान सखीगण लइया॥२१॥

घर पहुँचकर राई स्नान करक
प्रसाद पाती हैं॥२१॥

प्रसाद पाइते राधार जाय एक दण्ड।
कृष्णे देखि पाक क

प्रसाद पाते-पाते श्रीराधाजीका एक-दण्ड चला जाता है। श्रीकृष्णको देखकर अर्थात् श्रीकृष्णक
समय देखकर राधाजी अमृतक
जाती हैं॥२२॥

पक्वान्न मिष्ठान्न सब कृष्णेर लागिया।
तुलसीर हाते ताहा देन पाठाइया॥२३॥

जब श्रीकृष्णक
व्यञ्जन और मिष्ठान्न इत्यादि सबक
तुलसीक

एकत्रिश दण्डे राई विरले बसिया।
माला गाँथे सुखे तबे कृष्णेर लागिया॥२४॥

इकतीसवें-दण्डमें राई एकान्तमें बैठकर श्रीकृष्णक
सुखपूर्वक माला गूँथतीं हैं॥२४॥

चन्दनघर्षणे आर ताम्बुलसज्जाय।
सन्ध्या आसि उपनीत एसब क्रियाय॥२५॥

इस प्रकार श्रीराधाजी द्वारा चन्दन-घिसने और ताम्बूल-सजाने आदि सेवाकार्य करते-करते सन्ध्याका समय उपस्थित हो जाता है॥२५॥

एइ बत्रिश दण्ड हइल दिवा लीला।
सन्धयाकाले राई किछु विश्राम करिला॥२६॥

इस प्रकार इन बत्तीस-दण्डोंकी दिवालीला होती है। सन्ध्याक

इति दिवालीला समाप्त

रात्रि–लीला

दुई दण्ड श्रीराधार शय्याय शयन।
तबे दुई दण्डे राधार हयत रन्धन॥१॥

दो–दण्डक
तथा उठनेक
जिसमें उनका दो–दण्डका समय व्यतीत हो जाता है। (उसक
बाद वे किसी सखीक
भोजन भेज देती हैं तथा स्वयं नन्दालयका चिन्तन करते हुए बैठी रहती हैं)॥१॥

छय दण्ड परे कृष्ण प्रसाद आसिल।
सखी सङ्गे राधा तबे भोजन करिल॥२॥

छठे–दण्डक
लौट आती है तथा फिर श्रीमती राधिका सखियों सहित बड़े आनन्दसे भोजन करती हैं॥२॥

सप्त दण्डे राई पुनः करिल शयन।
उठि दश दण्ड अभिसार आयोजन॥३॥

सॉँतवें–दण्डमें राई पुनः शयन करती हैं तथा दसवें–दण्डमें उठकर अभिसारकी तैयारी करने लगती हैं॥३॥

सङ्क
द्वादश दण्डेते कुञ्जे उपस्थित हई॥४॥

सङ्क
लग जाता है। बाहरवें–दण्डमें वे क

त्रयोदश दण्डे सेवे ताम्बुल चन्दन।
कृष्णसने रासलास्य लये सखीगण॥५॥

तेरहवें-दण्डमें ताम्बूल और चन्दनादि द्वारा श्रीकृष्णकी सेवा करती हैं तथा श्रीकृष्णक
सखियों सहित प्रस्तुत होती हैं॥५॥

रासादि कौतुक
सखीगण मिलि राधाकृष्ण गुण गाय॥६॥

रास आदि कौतुक करते-करते चार-दण्ड बीत जाते हैं, जिसमें सखियाँ मिलकर श्रीश्रीराधाकृष्णका गुणगान करती हैं॥६॥

प्रेमरसे राधाकृष्ण आनन्दित मने।
क

प्रेमरसमें डूबकर श्रीश्रीराधाकृष्ण आनन्दित होकर क
शयन करते हैं तथा सखियाँ उनकी सेवा करती हैं॥७॥

अष्टादश दण्डे पुनः क
नाना पुष्प वेश हय नाना अलङ्कार॥८॥

अठारहवें-दण्डमें पुनः वे दोनों क
तथा नाना प्रकारक
होते हैं॥८॥

क
पुष्प शय्यापरे दुँहे शयन कराय॥९॥

फिर क
तत्पश्चात् दोनों पुष्पोंसे बनी शय्यापर शयन करते हैं॥९॥

उनविंश दण्डे पुनः भोजन विलास।
ताहे वृन्दादेवी आदिर मनेर उल्लास॥१०॥

उन्नीसवें-दण्डमें पुनः भोजन विलास होता है, जिसे देखकर वृन्दादेवी आदिक

विंश दण्डे राधाकृष्ण करेन विलास।
चारिदण्ड विलासेते दोहाँर उल्लास॥११॥

बीसवें-दण्डमें श्रीश्रीराधाकृष्ण विलास करते हैं, इस चार-दण्ड तक क

चतुर्विंश दण्डे निद्रा जान दुइजने।
दुई दण्ड क

चौबीसवें-दण्डमें दोनोंको नींद आ जाती है और दो-दण्ड तक दोनों आनन्दित होकर क

षड्विंशेते क
परस्पर सुधालाप सप्रेमजल्पना॥१३॥

छब्बीसवें-दण्डमें क
दोनोंमें विरहकी भावना उदित होती है। दोनों परस्पर प्रेमसे परिपूर्ण जल्पना जैसी अमृतमयी वार्त्तालाप करते हैं॥१३॥

एईरूपे दुई दण्ड जाइते जाइते।
क

इस प्रकार क
दो-दण्ड लग जाते हैं। तब क
अपने-अपने घरकी ओर चल देते हैं॥१४॥

दुई दण्डे आसि राई यावटे पशिला।
मुहूर्त्तेक रात्रि छिल सुखे निद्रा गेला॥१५॥

दो-दण्डमें राई क
एक मुर्हूत्त रात्रि शेष रहनेक
सुखपूर्वक सो जातीं हैं॥१५॥

राधाकृष्ण लीलाखेला वर्णने ना जाय।
संक्षेपे कहिनु किछु सेवार निर्णय॥१६॥

यद्यपि श्रीश्रीराधाकृष्णक
किया जा सकता, तथापि मैंने संक्षेपमें सेवाक
इङ्गित किया है॥१६॥

रागानुगा हइया कर साध्य साधन।
सिद्धदेहे कर सदा मानसी सेवन॥१७॥

रागानुगा होकर साध्यको प्राप्त करनेक
करो। सिद्धदेहसे सदैव अपने इष्टकी मानसी सेवा करो॥१७॥

स्थूल देहे कर सदा श्रवण कीर्त्तन।
वैध धर्मे थाकि धर्म करह पालन॥१८॥

स्थूलदेहसे अर्थात् बाहरसे सदैव श्रवण और कीर्त्तन करो। वैध-धर्ममें अर्थात् श्रुति, स्मृति, पुराण और पञ्चरात्र—इन

शास्त्रोंकी विधियोंका पालन करते हुए, दूसरे शब्दोंमें प्राकृत सहजियावाले भावोंको सम्पूर्ण रूपसे परित्याग करक आत्मधर्मका पालन करो॥१८॥

अति शीघ्र अप्राकृत देह व्यक्त हबे।
स्थूल लिङ्ग देह छाड़ि, नित्य सेवा पाबे॥१९॥

ऐसा करनेसे अतिशीघ्र ही अप्राकृत देहकी स्फ तथा स्थूल और लिङ्ग शरीरका परित्याग होनेपर नित्य सेवाकी प्राप्ति होगी॥१९॥

श्रीरूप रघुनाथ पदे जार आश।
चतुःषष्टि गुप्त सेवा कहे कृष्णदास॥२०॥

श्रीरूपगोस्वामी तथा श्रीरघुनाथदास गोस्वामीक
कमलोंक
चौसठ प्रकारकी गुप्त सेवाओंक
है॥२०॥

दण्डात्मिका सेवा समाप्त।

प्रयोजनीय पात्र–सूची

पात्र	श्लोक संख्या	परिचय
गुणमञ्जरी	९२	श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामीक स्वरूपका नाम।
तुलसी	८, १०, १८, ८९, ९०	ग्रन्थकार श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक श्रीराधारमण चक्रवर्तीक स्वरूपका नाम।
प्रेममञ्जरी	९१	ग्रन्थकारक श्रीगङ्गा नारायण चक्रवर्तीक स्वरूपका नाम।
भानुमती	९३	श्रील जीव गोस्वामीक स्वरूपका नाम।
मञ्जुलाली	९२	श्रील लोकनाथ गोस्वामीक स्वरूपका नाम।
रङ्गमञ्जरी	१०, ९१	ग्रन्थकारक चरण चक्रवर्तीक नाम।
रतिमञ्जरी	१०	श्रील रघुनाथदास गोस्वामीक स्वरूपका नाम।
रसमञ्जरी	९२	श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामीक स्वरूपका नाम।
रूपमञ्जरी	८, १०, ९४	श्रील रूप गोस्वामीक स्वरूपका नाम।

पात्र	श्लोक संख्या	परिचय
लवङ्गमञ्जरी	९३	श्रील सनातन गोस्वामीक स्वरूपका नाम।
विलासमञ्जरी	९१	श्रील नरोत्तम दास ठाक सिद्ध स्वरूपका नाम।

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरने श्रील रूपगोस्वामीका पदाङ्क अनुसरणकर विपुल अप्राकृत भक्ति साहित्यका सृजनकर विश्वमें श्रीमन् महाप्रभुके मनोऽभीष्टको स्थापन किया है। साथ ही इन्होंने श्रीरूपानुग विरुद्ध कुसिद्धान्तोंका खण्डन भी किया है। इस प्रकार गौड़ीय-वैष्णव जगत्में ये परमोज्ज्वल आचार्य तथा प्रामाणिक महाजनके रूपमें ही प्रपूजित हुए हैं। ये अप्राकृत महादार्शनिक, अप्राकृत कवि और अप्राकृत रसिकभक्त तीनों रूपोंमें ही विख्यात हैं।

श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

प्रेष्ठस्वपाणिकृतकौसुमहारकाञ्ची-
केयूरकुण्डलकिरीटविराजिताङ्गीम् ।
त्वां भूषयाणि पुनरात्मकवित्वपुष्पै-
रास्वादयानि रसिकालिततीरिमानि ॥

भावानुवाद—श्रीकृष्ण द्वारा अपने हाथोंसे बनाये गये पुष्पोंके हार, काञ्ची (कटिभूषण), केयूर (बाजूबन्द), कुण्डल और किरीट (मुकुट) को धारण करनेवाली आपको मैं पुनः अपने कवितारूपी पुष्पोंके द्वारा विभूषित करूँगी (अर्थात प्रियतम द्वारा पुष्प चयनसे लेकर पुष्पके आभूषण बनाने तथा आपको अपने ही हाथोंके द्वारा धारण करानेके समय उनकी क्रिया-मुद्राओं, भाव-भङ्गिमा तथा आपके द्वारा हृदयमें अनुभव किये जानेवाले भावोंको कविताके माध्यमसे श्रवण कराकर आपको लज्जारूपी पुष्प द्वारा विभूषित करूँगी) एवं इन समस्त कवित्व-रसिक सहचरियोंको कविता-रसका आस्वादन कराऊँगी ।

(श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमः श्लोक संख्या १५)